CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीर्थङ्कर महावीर

२८१९५

लेखक

प्रो० पन्नालाल धर्मालङ्कार

हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

प्रस्तावना लेखक

डाक्टर राजवली पाण्डेय एम० ए०

प्रोफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय काशी

प्रकाशक

लल्लन जैन

मन्त्री वैशाली तीर्थ प्रबन्धक कमेटी

रतनपुरा, छपरा (विहार)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्ग संख्या.................. प्राप्ति-संख्या......................

ग्रन्थ-कार्ड

श्री गणेश वर्णी दि० जैन (शोध) संस्थान

ग्रन्थागार

नरिया, वाराणसी-५

ग्रन्थ नाम तीर्थंकर महावीर

लेखक प्रो० पन्ना लाल धर्मालंकार

यंत्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रद्धाके दो शब्द

महापुरुषोंके यशरूपी शरीरमें जरा-मरणका भय नहीं होता; इसलिए उनका जीवनचरित नित्य नूतन बना रहता है। इसका रहस्य यह कि उनकी दृष्टि वर्तमान, सामयिक और आवश्यकसे सीमित नहीं होती, अपितु उसमें तीनों काल स्थित होते हैं। वे केवल समयकी प्रतिक्रियावश राग द्वेषसे प्रभावित होकर किसी कार्यमें प्रवृत्त नहीं होते। अतः मेरे विचारमें उनके अवतरण, ज्ञान और उपदेशकी व्याख्या राजनैतिक तथा आर्थिक आधार पर नहीं हो सकती। आजकलकी यह व्याख्याकी शैली आधुनिक अज्ञानमूलक रागद्वेषसे उत्पन्न हुई है। भगवान् महावीर जैसे महापुरुष पर यह व्याख्या लागू नहीं होती। अन्य महापुरुषोंके समान उन्होंने जीवन और जगत्के मौलिक प्रश्नोंका समाधान संसारके सामने रखा। अतः उनके उपदेश बराबर संसारका पथप्रदर्शन करते रहेंगे; किसी भी राजनैतिक या सामाजिक व्यवस्थामें उनकी उपयोगिता कम नहीं होगी।

भगवान् महावीरकी जयन्तीके अवसर पर उनके कुछ उपदेशोंका विशेष स्मरण किया जा सकता है। उन्होंने निगम और आगममें आगमका महत्व बतलाया, जिसका आधार कोई बाहरी प्रमाण, आदेश या प्रेरणा नहीं किन्तु मनुष्यका अपना निजी निरीक्षण और अनुभव है। मनुष्यके विकासमें इन दो प्रवृत्तियोंका बड़ा स्थान है। दूसरी बात जो उन्होंने बतलायी वह यह कि ईश्वरत्व या ऐश्वर्य मानव जीवनके बाहर कोई अलौकिक तत्त्व नहीं है मनुष्य अपने पुरुषार्थसे उसको अपने जीवन में ही प्राप्त कर सकता है; किसी अतिरेकी ईश्वर पर परावलम्बन इसके लिये आवश्यक नहीं। तीसरी विशेष बात उनकी यह थी कि 'सत्य' के सम्बन्धमें किसीका एकाधिकार या दुराग्रह नहीं हो सकता; उसके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनन्त रूप हैं; अतः विचार और दर्शनके जगत्में सहनशीलता और उदारता अनिवार्य है। शुद्धाचरणकी महत्ता उनके उपदेशकी चौथी विशेषता है। धार्मिक और दार्शनिक अनुभवके लिए मनुष्य का पशु-धरातलसे ऊपर उठना आवश्यक है। शील, संयम-नियम, तपश्चर्या आदि मनुष्य को ऊपर उठानेवाले साधन हैं; इनको छोड़कर मनुष्य पथभ्रष्ट हो जाता है। वैसे तो भगवान् महावीरके अनेक उपदेश हैं किन्तु उनकी जयन्तीके अवसर पर यदि इन थोड़े उपदेशोंका संस्मरण कर उनको जीवनमें उतारा जा सका तो मानव-जीवन सार्थक हो सकता है।

श्री पं० पन्नालाल जी ने 'श्री महावीर जयन्ती' लिखकर भगवान्के जीवन की झाँकी जनताके सामने रखी है और उससे लोगों का बड़ा उपकार किया है। आशा है सत्य और अहिंसाके पालनमें लोग इससे प्रोत्साहित होंगे।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
फाल्गुन शु० ११, २००७

राजबली पाण्डेय

श्रीमहावीरजयन्तीका प्रोग्राम

प्रातःकाल

(१) प्रभातफेरी—महावीर गुण-गायन।
(२) झण्डोत्तोलन—झण्डागीत।
(३) श्री भगवान् महावीरके जन्म-कल्याणककी पूजा।

मध्याह्न काल; या सायंकाल

(१) श्री भगवान् महावीर की जीवनगाथा।
(२) श्री महावीर का दिव्यसन्देश।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राक्कथन प्रथम संस्करण

आज का युग इतिहासका युग है। इस समय इतिहासके आधार पर जो तत्त्व प्रमाणित होते हैं उनको ही शिक्षित समाज माना करती है तथा महत्त्व देती है। आजसे २०-२५ वर्ष प्रथम लोगोंकी यह धारणा थी कि जैनधर्म बौद्धधर्मको शाखा है, क्योंकि दोनों धम अहिंसा पर प्रतिष्ठित हैं। किन्तु इतिहासके अनुसन्धानिकोंने अपने प्रामाणिक अनुसन्धानसे यह निर्विवाद सिद्ध कर दिया कि ईसवी सन्से आठ सौ वर्ष पूर्व जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथका अस्तित्व था एवं पार्श्वनाथ ऐतिहासिक महासत्त्व थे। उन्होंने जैनधर्मका प्रसार किया था। उनके २५० वर्ष बाद और ईस्वी सन् से ५९९ वर्ष पूर्व वर्द्धमान महावीरका जन्म कुण्डग्राममें हुआ था जो कि उत्तर विहारमें रेवा-गंडक नदीसे पूर्व मिथला तक फैला हुआ है, जिसका नाम पुराण कालमें विदेह था और जहाँ भारत गणतंत्रने प्रथम वैशाली गणतंत्रके नामसे ख्याति पाई थी। श्रीवर्द्धमानका जन्मस्थान आज तककी खोजसे सुनिश्चित हो गया है। जैन वाङ्मयमें कुंडग्राम (कुंडलपुर प्रचलित) माना जाता है।

समयका निर्णय एक लेख द्वारा पं० जुगलकिशोरजी मुख्तारने अनेकान्त पत्रके प्रथम वर्षकी प्रथम किरणमें अपने नाना तर्क उपस्थित कर सिद्ध किया है कि महावीर निर्वाण सवत् जो जैनसमाजमें चल रहा है वह सही है। उसमें आपने अनेक आधार शास्त्रोंके और ऐतिहासिकोंकी गम्भीर खोजके देकर पाठकोंको विचार योग्य बहुत सामग्री दी है। अतः मुझे यह कहनेमें किसी प्रकारका सन्देह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नहीं है कि भगवान् महावीर स्वामीका जन्म समय ईसवीसे ५९९ वर्ष पूर्व हुआ था। और उनका निर्वाण ईसवीसे ५२७ वर्ष पूर्व हुआ था, जैसा कि मुख्तार सा० ने सिद्ध किया है। जबकि महात्मा बुद्धका महाप्रयाण ईसवासे ४८३ वर्ष पूर्व हुआ था और उनकी महा-प्रयाणके समय ८० वर्षकी अवस्था थी। इस हिसाबसे ५६३ ईसवी पूर्व उनका जन्म हुआ था। इससे यह बात स्वाभाविक सिद्ध हो जाती है कि महात्मा बुद्धसे करीब ३४ वर्ष पूर्व भगवान् महावीर हुए और महावीरके तपःकालमें जब कि भगवान् महावीर आत्म परिशोधन कर रहे थे महात्मा बुद्ध उत्पन्न हुए। तथा महावीरको जब पूर्ण ज्ञान हुआ तब महात्मा बुद्धकी अवस्था ८ वर्षके करीब होगी।

इस गणनासे यह भी ज्ञात हो जाता है कि भगवान् महावीरने २७ वर्ष तक अहिंसा, समता और वीतरागताका पाठ तत्कालीन जनताको पढ़ा दिया था, तब सिद्धार्थ राजकुमार बुद्धत्वके विकासके लिये कपिलवस्तुसे ३० वर्षकी वयमें चले थे। और ६ वर्ष तक उन्होंने अपनी खोज, शुद्धि और समाधि बलसे बोधि प्राप्त की थी। दोनों महापुरुष सिर्फ २ वर्ष करीब एक साथ अहिंसाका प्रचार कर सके। महावीर प्रभुने ३० वर्षके करीब धर्म प्रचार किया अतः यह तो निश्चित ही है कि भगवान् महावीरकी अहिंसाज्योतिसे एवं समताके समस्त आधारोंसे महात्मा बुद्ध परिचित हो चुके थे। जन्मसे ही कुमार सिद्धार्थने श्रीमहावीरके निर्वाण तक माँस नहीं खाया। सिर्फ अन्तके दिनोंमें जब उन्होंने यह अनुभव किया कि किन्हीं कठिन परिस्थितियोंमें यदि भिक्षुओंके पात्रमें मांस भी आ जाय तो उसे ग्रहण करनेमें अहिंसातत्त्वका पूर्णतया विगाड़ नहीं होता, अतः जिस परिस्थितिमें उन्हें माँस ग्रहण करना पड़ा, वही या तत्सम परिस्थिति आ जावे, तो माँस भी ग्राह्य है। ऐसी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्यवस्था महात्मा बुद्धने तथा उनके बाद होनेवाले उस धर्मके संचालकोंने दी होगी।

यही जैनाचार और बौद्धाचार की विषमता अपना असली रूप लेकर पूर्णतया आ गई। उसने अहिंसाका विषम स्तर द्योतित कर दिया।

जैनदर्शनने अहिंसाकी व्याख्या करते समय प्राणीमात्रको समताका आधार बताया था। उनके बादसे आज तक महावीर स्वामीके निर्वाणसे २४८२ वर्ष बाद भी हिंसा और अहिंसाके वे ही रेखाचित्र ज्योंके त्यों आज अपने पूर्व रूपमें पाये जाते हैं जो भगवान् महावीरने अपनी समवशरण सभामें प्रतिपादित किये थे।

इस कथनका आशय यह है कि जैनदर्शन अपने जिस समता-मूलक अहिंसाके आधार पर प्रत्येक व्यक्तिके पूर्ण विकास की घोषणा करता था वह अक्षुण्ण बनी हुई है। उसे सम्मर्दन करनेका विचार आज तक किसी वीरभक्त महर्षीने नहीं किया, अतः आज तक जैनदर्शनका वह मूलाधार सुरक्षित है।

यह हो सकता है कि महावीरके अनुयाइयोंके आचार व्यवहार में समयका असर, वासनाओं की आँधी और भौतिक चाकचिक्य का धारासंपात होनेसे शिथिलता, उदासीनता या भ्रष्टता आ गई हो। भारतमें यह तत्त्व सदा निर्विवाद रहा है कि सिद्धान्त सिद्धान्त है वह सदा हर समय हर परिस्थितिमें अपना स्वरूप अक्षुण्ण बनाये रहता है और व्यवहार व्यवहार है। उसमें सदा परिवर्तन होते रहे हैं एवं होते रहेंगे। इसलिये व्यवहारोंसे सिद्धान्त नहीं बदला जा सकता। प्रकाश रहते हुए भी मनुष्य गड्ढेमें गिर सकता है। इसके लिये प्रकाश दोषी नहीं, गिरनेवालेका प्रमाद ही उसका कारण माना जायगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहिंसा वीरोंका धर्म है, कायरोंका नहीं। भगवान् ऋषभदेव अहिंसाके आद्य प्रचारक थे। उनके पुत्रने दिग्विजय कर अपने बाहुबलसे चक्रवर्तित्व प्राप्त किया था। और अन्तमें परिव्राजक होकर अपने मानसिक विचारों पर विजय पाकर महानिर्वाण भी प्राप्त किया था। गृहस्थाचारकी अहिंसा सीमित धाराओं तक होती है और योगी की अहिंसा असीमित होती है। उनकी दयाका श्रोत प्राणी मात्र तक बहता है। भगवान् महावीरने अपने दिव्य सन्देश एवं आचरणोंमें दोनों अवस्थाओंकी अहिंसाका गृहस्थीमें रहकर और योगी बनकर निर्वाह किया था। उसका दिग्दर्शन सक्षेपसे कराना ही इस निबन्धका उद्देश्य है।

चूंकि भगवान् महावीरकी जन्मगांठके महत्त्वको बताना निबन्धका उद्देश्य है, अतः मैं चाहता हूँ कि यह पुस्तक जैन व जैनेतर समाजके समक्ष भगवान् महावीरके आचरण और उपदेशोंका आदर्श उपस्थित करे एवं उनकी आत्मा पर अहिंसा और उसके आधार पर संतुलित आत्मविकासका प्रशस्त मार्ग अंकित कर दे। इसी आशयसे यह लघुतम प्रयास है।

यह प्रकट करते हुए परम प्रसन्नता हो रही है कि श्रद्धेय प्रोफेसर डा० श्रीराजबली पाण्डेयने पुस्तकके ऐतिहासिक तत्त्व पर प्रकाश डालनेकी कृपा की एवं अपनी प्रस्तावना 'श्रद्धाके दो शब्द' शीर्षक देकर लिख दी तथा पुस्तक की उपयोगिताकी ओर जनताका ध्यान आकृष्ट किया। इसके लिये मैं डाक्टर साहबका अत्यन्त आभारी हूँ।

काशी विश्वविद्यालय,
फाल्गुन शुक्ला १२, वीराब्द २४७७

पन्नालाल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीय आवृत्ति

श्री महावीर जयन्तीका यह दूसरा संस्करण तीर्थंकर महावीरके नामसे प्रकाशित हो रहा है। आजसे पाँच वर्ष पूर्व पुस्तक लिखते समय मेरी धारणा थी कि महावीरकी जन्मनगरी मगधका वह कुण्डलपुर है जिसे वर्तमानमें तीर्थस्थानके रूपमें माना जाता है। पुस्तककी भूमिका लेखक हिन्दू विश्वविद्यालयके इतिहास अध्यापक डा० राजबली पाण्डेय महोदयने श्री महावीर जयन्ती पुस्तक पढ़कर कहा कि आपने पुस्तक लिखनेमें एक ऐतिहासिक भूल की है। भ० महावीरका जन्म गणतंत्रके प्रधान केन्द्र वैशालीमें हुआ है। ज्ञातृगणतन्त्रके नायक राजा सिद्धार्थ उनके पिता और वैशाली गणतन्त्रके अधिनायक महाराजा चेटक महावीरके मामा थे। मैंने कहा डाक्टर साहब! अब तो पुस्तक छप चुकी। परिशोध करनेका अब समय भी नहीं है। विना शास्त्रीय आधारोंके ऐसे परिवर्तन करना उपयुक्त नहीं। मैं आपके मतका भूमिकाके फुटनोटमें संकेत कर दूँगा। तथा अगले संस्करणमें शास्त्रीय और ऐतिहासिक सामग्रीसे अनुसन्धानकर अपनी धारणाको सही बनाऊँगा तब कुछ लिख सकूँगा। इसके बाद वैशाली ती० प्र० कमेटीके उत्साही मंत्री बाबू लल्लन जी जैनने भुक्ति वैशालीके बावन पोखरमें भूगर्भसे प्राप्त भगवान् महावीरकी भव्य मूर्तिकी प्राणप्रतिष्ठा करनेके लिए मुझे आमंत्रित किया।

बाबू साहबके आमंत्रण पर मैं आजसे ४ वर्ष पूर्व वैशाली गया और वहाँके वातावरण और इतिहासके प्रकाशमें मैंने वहाँका गम्भीर अध्ययन किया। वहाँसे लोटकर मैंने शास्त्रीय आधार टटोले। इस सब परिश्रमके फलस्वरूप मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि भ० महावीरका जन्मस्थान वैशाली है। पर नियत स्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खोज करना अभी शेष था। इसी प्रकार और भी कई प्रश्न मेरे सामने थे। मैं यह भी जानना चाहता था कि भगवान् महावीरके वंशके लोग इस समय यहाँ पाये जाते हैं या नहीं और उनकी आचार परम्परा क्या है।

इसी बीच यहाँ विहार सरकारके सहयोगसे एक प्राकृत जैन इंस्टीट्यूटकी स्थापना हुई। जिसके डायरेक्टर श्री मान् हीरालाल जी जैन एम० ए०, डी० लिट्० नियुक्त हुए। मैंने उनसे भी सम्बन्ध स्थापित किया। उनका पहला प्रश्न यह था कि इस स्थानके लिए आपके पास शास्त्रीय आधार क्या है? आपको विहार सरकार और जैन जनताको यह बतलाना है कि भगवान् की जन्मभूमि वैशालीमें उसका अमुक स्थान है। इसके लिए मैंने डाक्टर साहबके सामने कई प्रमाण उपस्थित किये। उनमें आचार्य पूज्यपाद की दशभक्ति, उत्तरपुराण और हरिवंशपुराणके प्रमाण मुख्य थे। श्रीमान् पं० फूलचन्द जी सि० शास्त्री संपादक वर्णी जैन ग्रन्थमालाने भी उन प्रमाणों की पुष्टि की। फलतः डाक्टर साहबने वैशालीके कुंडपर—वासोकुंड की ओर विहार सरकारका ध्यान आकर्षित किया। विहार सरकारके प्रधान पुरुषोंने भी वासोकुंड जाकर परिस्थितिका अध्ययन कर निश्चित किया कि प्राकृत जैन विद्यापीठ वासोकुंडमें ही बनेगा, क्योंकि यही स्थान भगवान् महावीरकी जन्मभूमि प्रतीत होता है।

आसाम जाते समय भी मैं डा० सा० से मिला था। उस समय उनके विशेष परामर्श और आग्रहसे मैं वासोकुंड गया। वहाँ जो प्लाट विहार सरकारने विद्यापीठके लिये चुना है उसके पास ढाई बीघाका एक ऐसा प्लाट है जो ढाई हज़ार वर्ष बाद भी महावीरका जन्मस्थान माना जाता है। वहाँ लगभग २०–३० घर क्षत्रियोंके हैं। वे आज भी अपनेको भ० महावीरके वंशज मानते हैं। मैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२-४ सज्जनोंसे मिला भी। मांसके खानेका प्रसंग आने पर उन्होंने मुँह बिचकाकर कहा—साहब हमने या हमारे किसी बालकने आज तक मांस नहीं खाया है। हमारे पूर्वज भी मांस नहीं खाते थे। हमारे वंशमें आज भी अहिंसा की प्राणप्रतिष्ठा है। हमें भ० महावीरके वंशधर होनेका गौरव प्राप्त है जहाँ अहिंसाके जन्मदाता भ० महावीरका जन्म माना जाता है उस स्थान पर आज भी प्रतिदिन दीपक जलाया जाता है। इन सब बातोंको देखकर मेरा तो यही दृढ़ विश्वास होता है कि महावीर स्वामीका जन्मस्थान यही वासोकुंड कुंडग्राम होना चाहिए। उसके पास वणिक ग्राम और कुल्लाग सन्निवेशका अपभृष्ट रूप कुल्याग्राम भी है। भगवान् महावीरने प्रव्रज्याके बाद प्रथम आहार यहीं लिया था। उससे कुछ फासले पर दशपुर है। यहाँ पर कुल्लाग सन्निवेशके गणनायक राजा कुल्यने जाकर महाश्रमण महावीरको दूसरी बार दूधभातका आहार दिया था। ये सब तथ्य भी पूर्वोक्त निष्कर्ष की ही पुष्टि करते हैं।

प्रस्तुत संस्करणमें इस आधारसे मैंने आवश्यक संशोधन किया है। यह मेरा अल्प प्रयास है। इच्छा तो यह है कि मैं इन सब तथ्योंके प्रकाशमें भ० महावीरका एक वृहत् जीवनचरित लिखूं। तीनसौ पृष्ठकी एक पुस्तक लिखी भी गई है। पर उसमें अभी कई नये अध्याय जोड़ने हैं। तत्काल वैशालीकी जनता और जैन समाजको परिचय करानेके लिए यह संक्षिप्त झाँकी प्रस्तुत कांगई है।

मुझे यह लिखते हुए प्रसन्नता होती है कि गौहाटीकी जैन समाजके उदार सज्जनोंने इसके प्रकाशनके लिये तीन हजार पुस्तकों का व्यय देना स्वीकार किया है। इस तरह यह संस्करण छप कर प्रकाशमें आ रहा है।

चैत्र कृष्णा ८
सं० २०१२ वीराब्द
२४८२

निवेदक
पन्नालाल धर्मालंकार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाशकीय

आजसे पाँच वर्ष पूर्व श्रीमहावीर जयन्ती इस नामसे प्रस्तुत पुस्तक बाबू विमलकुमार पंचरत्न सं० भारतीय साहित्य सदन २।७१ भदैनी बनारस से निकली थी। उसका समाजने यथोचित स्वागत किया। इसबार पुस्तकका कलेवर भी बढ़ गया और वह सामग्री इसमें आगई जो जैन समाजकी जानकारीके लिए अत्यावश्यक थी। प्रकाशक महोदयने इस परिवर्धित संस्करणके प्रकाशनकी स्वीकारता वैशाली तीर्थ० प्र० कमेटीको सहर्ष प्रदान कर दी। एतदर्थ हम प्रकाशकके आभारी हैं।

प्रस्तुत संस्करण गोहाटी समाजके निम्नांकित दातारोंकी सहायतासे छप रहा है अतः कमेटी इन सज्जनोंको भी हृदयसे साधुवाद देती है और जैन समाजके सज्जनोंसे सादर निवेदन करती है कि वे आजके युगके अनुरूप साहित्यका निर्माण करवाकर जैन और जैनेतर समाजमें अमूल्य-वितरण करवानेकी और ज्यादासे ज्यादा ध्यान देनेकी कृपा करें। यह पुस्तक भ० महावीरकी जन्मजयन्तीके अवसर पर वैशालीकी जनताके कर कमलोंमें निम्नांकित दातारोंकी उदार सहायतासे सादर समर्पितकी जा रही है।

प्राप्त द्रव्य	नाम दातार	प्रति
३०१)	सेठ चुन्नीलाल कन्हैयालालजी पाटनी	१०००
७५)	,, अमरचन्दजी भूमरमलजी पहाड्या	२५०
७५)	,, नंदलालजी पहाड्या पलासवाड़ी	२५०
३७।)	,, छोगमलजी मदनलालजी सेठी गोहाटी	१२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३७॥)	सेठ शिखरीलालजी भँवरलालजी	१२५
३७॥)	,, मिसरीलालजी काला	१२५
३७॥)	,, बाबू रतनचंद जैन काला	१२५
३७॥)	,, दीपचंदजी कपूरचंदजी	१२५
४०)	,, मोहनलालजी रारा	१३१
३५)	श्री बाबू भँवरलालजी सुमेरमल एयरआसाम	१२५
१५)	सेठ हनुमानबकसजी गंगवाल	५०
१२॥)	,, लोदूलालजी	४१
७॥)	,, जोहरीमलजी झांझरी	२५
७॥)	,, रंगलालजी वाकलीवाल	२५
७॥)	,, बाबू शिखरीलालजी पांड्या	२५
७६३॥		२५४७

उपर्युक्त दातारोंको सादर धन्यवाद—

निवेदक—**लल्लनजी जैन**
मंत्री—वैशाली ती० प्र० कमेटी
छपरा–विहार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्मृति

श्रीमान् सेठ चुन्नीलाल कन्हैयालाल जी की सुपुत्री स्व० बनारसीलाल देह निवासी सेठ केशरीमलजीके सुपुत्र स्व० बाबु माणिकचंदकी धर्मपत्नी थी। माणिकचन्द्र मेरा शिष्य था। वह जैसा विनीत और मेधावी था वैसा होनहार भी था पर अचानक राजयक्ष्मा का वह ग्रास बन गया। उसकी सभी तरह चिकित्सा की गई पर आयु पर किसीका वश न चला। उसीकी बीमारीमें स्व० बनारसीने दिन-रात एककर हर प्रकारसे सेवा की। फलतः उस भयंकर व्याधिका इसे भी ग्रास होना पड़ा। जब उसे यह पता चला कि मुझे यक्ष्मा हो गया है तो उसने गुरुओंसे दूसरी प्रतिमाके व्रत स्वीकार कर लिए और अपने पिताके पास गोहाटीमें रहकर धर्मध्यान करने लगी। बनारसी की यह हार्दिक इच्छा थी कि मैं सिद्धचक्रविधान करवा कर स्वयं उसका पुण्यार्जन करूँ, पर यह न हो सका। अन्तमें वह स्वर्ग प्रयाण करनेके पूर्व अपने पिता सेठ कन्हैयालाल जीसे अनुरोध कर गया कि आप मेरी ओरसे यह विधान मुझे बुलाकर करवा दें। मुझसे भी उसने अनुरोध किया कि आप अष्टान्हिकामें आकर यह पुण्यकार्य अवश्य करा देना। तबसे मेरे ऊपर स्व० बेटा बनारसी का ऋण था, इसलिए फाल्गुन शुक्ला अष्टमी सं० २०१२में गोहाटी आया और सेठ कन्हैयालालजीके आग्रहसे वह विधान सादर सम्पन्न करा दिया। उनके छोटे भाई सेठ चम्पालालजीने इन्द्र बनकर सारी क्रियायें उत्साह और भक्तिसे सम्पन्न की। अन्तमें हवनके समय आपलोगोंने मेरा अनुरोध देखकर तीर्थङ्कर महावीर नामक प्रस्तुत निबंधकी १००० प्रति छपानेके लिए स्व० बनारसीकी स्मृतिमें प्रदान किये। स्वर्गीय आत्माको हम लोगोंके कृत्यसे तो क्या होना है वह अपने परिणामोंका फल पा चुका। पर लोग ऐसे दानोंको महत्व दें और अपने इष्ट वर्गकी स्मृति कायम रखें इसके लिए यह प्रयत्न स्तुत्य है।

पन्नालाल धर्मालंकार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

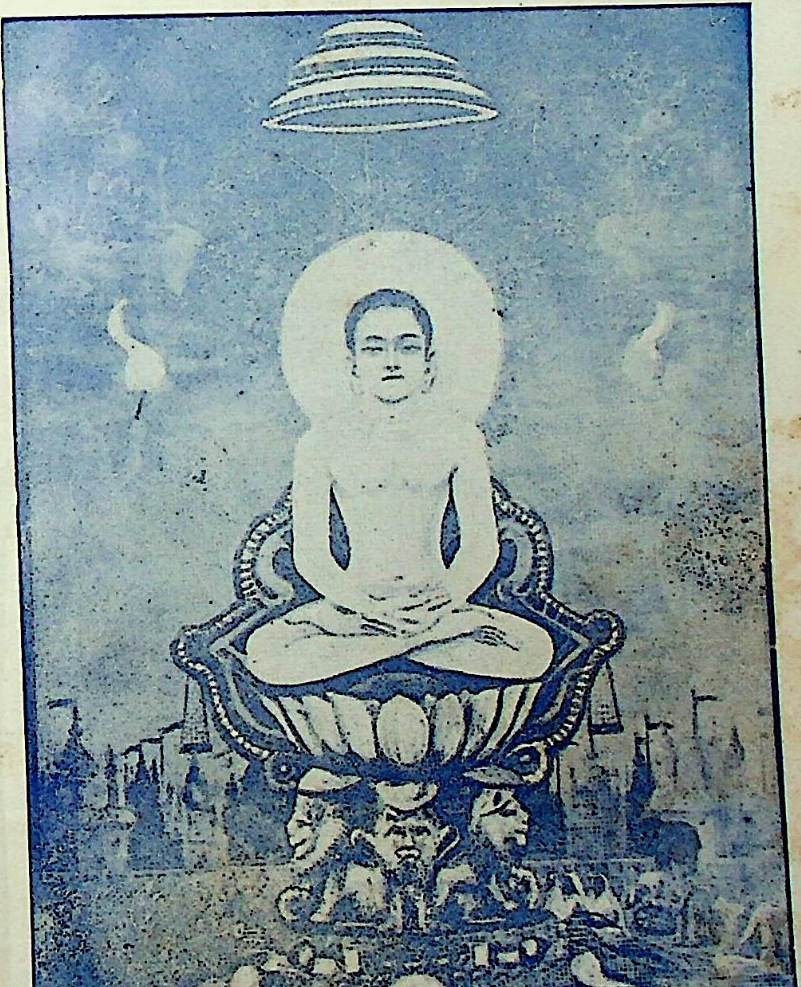

भगवान् महावीर

[सं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री के सौजन्य से]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीर्थंकर महावीर

मंगलाचरण

यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जग त जनतां या स्नपयति
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे

वीर प्रभुका जन्म

भगवान् महावीर स्वामीने अपने पवित्र अवतरणसे भारतवर्ष को २५५३ वर्ष पूव सनाथ किया था, इसमें तो अब इतिहास-वेत्ताओं को विवाद नहीं है। जैन वाङ्मय में उनका जो इतिवृत्त मिलता है उसके आधार प भगवान् का निर्वाण दिवस कार्तिक कृष्णा अमावस्या को रात्रि के चतुर्थ याम में मानने की रीति जैन समाज में सर्वत्र प्रचलित है। इस वर्ष की अमावस्याको वीर प्रभु का निर्वाण काल २४८१ व्यतीत हो गया है, यह २४८२ वां वर्ष चल रहा है।

भगवान् का जन्म चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था। उनकी आयु ७२ वर्ष की थी। इस हिसाब से भगवान् का जन्म आज से २५५३ वर्ष पूर्व हुआ था।

जन्मकाल का वातावरण

श्री भगवान् पार्श्वनाथ जब निर्वाण पधार गये तब भारत में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हिंसा का ज़ोर फिर बढ़ा, हिंसानन्दी विद्वानों की रसनायें लोल हो उठीं। जिस हिंसा का घोर विरोध भगवान् पार्श्वनाथ ने अपने तीर्थकाल में किया था, वही हिंसा क्रियाकांड और यज्ञाहुति के रूप में पुनः प्रस्थापित हुई। समय के परिवर्तन ने मनीषियों के उत्पादनद्वार में अर्गला ठोक दी, अध्यात्मज्ञा नयों का अभाव होने लगा। इन्द्रियलालसा के नग्नताण्डव होने लगे। राजाओं के हृदय विलासी बन गये। अत्याचारों से प्रजा उत्पीड़ित होने लगी। राजनीतिज्ञों के माथे ठनके। याजकों का गुरुत्व राजाओं पर अमर बेल बन गया। मदोन्मत्त राजाओं की विलासिता के लिये याजकों का वरद हस्त घृताहुति का काम करने लगा। राजाओं को ईश्वरावतार सिद्ध करनेवाली पोथियों का सूत्रपात हुआ। उनमें गोघ्न द्विज को अवध्य एवम् क्षमापात्र बनाने की व्यवस्थाएँ अंकित की गईं। नारी केवल विलासिता की कटपुतली मानी जाने लगी। उससे वेद-वेदाङ्ग पढ़नेका अधिकार कठोराज्ञा द्वारा छीना गया। सेवा करनेवाले दासताकी जंजीरोंमें जकड़े गये। वे घास पूसकी तरह खरीदे बेचे जाने लगे। यह परिस्थिति अढ़ाईसौ वर्ष तक उत्तरोत्तर भयंकर रूप धारण करती गई। फलतः संसार में त्राहि त्राहि मच गई। विचार स्वातन्त्र्य का मार्ग अवरुद्ध हो गया। आपसी द्वेष और मनमुटाव ने भारतीय जनता को घर और बाहर हतप्रभ कर दिया। ऐसी परिस्थिति में जनता किसी महासत्त्व की उपस्थिति के लिए व्याकुल हो उठी। भारत के प्रधान शासन की बागडोर पटना के राज्यवंशके हाथ में थी। इसलिए भारत की दृष्टि पटना विहार की ओर सहसा जाने लगी। राज्यविप्लव राजधानियों में ही प्रारम्भ होते हैं, अतः वज्जीभूमिके लिच्छविवंशीय इस भयानक आतंकसे कराह उठे और उन्होंने गणतन्त्र राज्यकी नींव डाली। समय ने उनका साथ दिया। अनुकूलताएँ वीरों के बाहुबल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में संलिप्त रहती हैं।

विहार प्रान्त में वैशाली नाम की एक प्रसिद्ध नगरी थी जो लिच्छवि, ज्ञातृ, मल्ल आदि स्वातन्त्र्यप्रिय क्षत्रियोंका विशाल हृदय मानी जाती थी। वही भारतीय गणतंत्रका प्रथम जन्म स्थान बनी। उसके संथागारमें १२ गणतंत्र नायक थे। प्रधान गणनायक महाराजा चेटक थे। उनके जामाता-दामाद राजा सिद्धार्थ ज्ञातृगणतंत्रके संचालक थे। उनकी राजधानी कुंड ग्राममें थी जो आज वैशालीसे लगभग दो मील दूर है। उनकी महारानीका नाम प्रियंकारिणी—त्रिशला था। वे महाराज चेटककी कन्या थीं।

महाराज चेटककी प्रथम कन्या होनेसे त्रिशलामें क्षत्रियोचित साहस, गंभीरता और दयालुता पूर्णतया विद्यमान थी। महिलाओं में जो स्वाभाविक गुण होने चाहिये उनसे तो महारानी त्रिशला ओतप्रोत थी ही। वे सदा महाराज सिद्धार्थका छायाकी तरह अनुसरण करती थीं। महाराजा सिद्धार्थ महारानीका ज्ञानगरिमा और स्फुट प्रतिभासे सदा आप्लावित होते रहते थे। एक दिन महाराजा सिद्धार्थ अपने शयनकक्ष में एकाकी विचार विनिमय करने में संलग्न थे। अकस्मात् त्रिशलादेवीने आकर महाराजकी गहरी चिन्ताका अनुभव किया। वे उनके दक्षिण पद पर हाथ रखकर बोलीं— नाथ! आज क्या आप किसी गहन विषयका चिन्तन कर रहे हैं? (शरीर पर हाथ रख कर) यह क्या? आज तो आपके शरीरका उत्ताप आपकी मानसिक वेदनाका प्रतीक हो रहा है? क्या राजकार्य्योंमें कोई गहरी उलझन आ गई है? महाराजाका उत्तर था—राजकार्य उलझनका दूसरा नाम है, जहाँ उलझन है वहाँ एक जाल है। जाल माया, ममता, अज्ञान और अपनी भूलों से बनता है। आज तक मैं अपनी प्रजा पर पुत्रकी तरह ममता रखता आया हूँ। इसका नतीजा यह हुआ कि हमारी प्रजाका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हौसला इतना बढ़ गया कि वह धर्मस्थानों को पापागार बनाने में संलग्न है। हजारों मूक प्राणी धर्मके नाम पर हवनकुंडों में जीते जी डाल दिये जाते हैं। भोले प्राणियों को धर्मके नाम पर भुलावे दिये जाते हैं। देवी चण्डिका के नाम पर मनो शराब पुजारियों का पेय बनी हुई है। मदिराके आवेशमें महिलाओं का सतीत्व गुप्तरीतिसे भ्रष्ट किया जाता है। राजकर्मचारियों को रहस्य छिपानेके लिये अभिशापकी धमकियोंके साथ उपायन दिये जाते हैं। प्रजा प्रतिदिन इन नारकीय अत्याचारों की पुकार मुझ तक करती है। किन्तु एक दो अभियुक्त हों तो विचार किया जाय। जहाँ कुँआमें ही भाँग पड़ गई हो वहाँ किस किसका जहर उतारा जाय। राज्य भरमें इसी तरह धर्मके नाम पर भ्रष्टाचार के समाचार पाकर आज मेरी अन्तर्वेदना हृदयस्पर्शिनी हो गई है। क्या करूँ समझ में नहीं आता ?

महारानी—राजन्! राजतंत्रकी चिरअभ्यस्त प्रजा गणतन्त्रके महत्त्वको धीरे धीरे समझेगी। राजतन्त्रके रहते हुए एक न एक उपद्रव खड़ा ही होता रहेगा। जब प्रजामें पापाचार हो जाता है तब गण तंत्रात्मक शासन पद्धतिसे परिस्थिति शीघ्र काबूमें कर ली जाती है। हमारे पिता को ही देखिये, वज्जियों का कितना उत्साह बढ़ गया है। धार्मिक व्यवस्था इतनी सुन्दर है कि किसी का हौसला तक दूसरों के सतानेका नहीं होता। प्रजा फौरन अत्याचारी को शासन सूत्रके हस्तगत कर देती है और गणतंत्र तुरन्त उसका न्याय कर अत्याचारों एवं कुकृत्यों का मार्ग बन्द कर देता है।

सिद्धार्थ—यदि गणतंत्र ही हिंसाकी नीति अपना ले, तब क्या होगा, यह प्रश्न मनमें उठता है। किन्तु महाराजा चेटक गण-तंत्र के नायक हैं, परम विवेकी और दयालु हैं। उनमें एक भी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दानवीय वासना नहीं है, अतः लिच्छवियोंकी गणतंत्र प्रजा उनकी छत्रछायामें पनप रही है। पर यहाँ ज्ञातृगणतन्त्रमें प्रबन्धसे प्रजा में जरा भी असन्तोष नहीं है। असन्तोष तो इस अन्ध धार्मिकतासे है। धर्म की बागडोर पुरोहितोंके हाथमें है। हमारे गणतन्त्रमें किसी भी धर्म पर बन्धन नहीं है। प्रत्येक नर-नारी अपनी मान्यताके अनुसार धर्म पालन करनेमें पूर्ण स्वतन्त्र है। मानवोचित कृति ही हमारे गणराज्य की नीति है, अतः हिंसा को हिंसा द्वारा दबाना मुझे इष्ट नहीं है। गणराज्यमें शिक्षाकी परिपूर्ण व्यवस्था है, पर सारे ही उपाध्याय याजक हैं। प्रचुरता से वेद-वेदांग पढ़ाना ही उनका लक्ष्य है। सदाचार और नागरिकता की शिक्षा से उनका ज्ञान योजनों दूर है। फलस्वरूप शिक्षा की व्यवस्था मेरी इच्छानुसार नहीं हो पा रही है। जो विद्वान् बाहर से बुलाये जाते हैं वे सब एक ही सांचे में ढले होते हैं। मैं यह सोच रहा हूँ कि इस भयानक परिस्थिति में इस धर्मान्धता को कैसे रोका जाय।

महारानी—महाराज! गणतंत्रके सूत्रसंचालकोंका धर्म है कि वे अपनी प्रजाकी सुख शान्ति के लिये अहर्निश चिन्ता करें। ऐसे वातावरणको बदलें जिससे प्रजाका उत्पीड़न होता हो। यह तो मैं मानती हूँ कि रक्त-रञ्जित वस्त्र रक्तसे धोकर निर्मल नहीं बनाया जा सकता, पर इस समय का वातावरण सहजमें ही नहीं बदला जा सकता। हमारे पिताजी भी कभी कभी इस विचारमें तन्मय होकर सोचते हैं। उनकी यह दृढ़ धारणा है कि इस वातावरण को बदलनेवाला कोई युगवीर शीघ्र ही अपने कल्याणकारी जन्म से भूमण्डल को सुशोभित करेगा। वे मुझे अपनी सारी पुत्रियों से अधिक स्नेह करते हैं। कभी कभी तो वे मेरा इतना आदर करते हैं कि मैं शर्मा जाती हूँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सिद्धार्थ—देवि त्रिशले ! इस परिस्थितिका गंभीर अध्ययन कर मैं तो इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि हम लोग कोई ऐसा प्रयत्न करें, जिससे धार्मिक वातावरण अहिंसामय बननेमें शीघ्र ही सफलता मिले। जब तक हम दृढ़तर प्रयत्न न करेंगे ये अत्याचार बढ़ते ही जावेंगे।

त्रिशला—हाँ ! सो तो होगा ही, पर हमको हताश नहीं होना चाहिये। सम्भव है इस धर्म संकटमें हमारी सद्भावनाएँ कोई समीचीन हल निकाल लें।

महाराज—देवि ! मैंने बहुत सोचा, अनेक उपासनायें की। संसार में दिनरात होनेवाले अत्याचारों की करुणकथा जब मैं अपने गुप्तचरों से सुनता हूँ तो आत्मा उत्क्लेदित हो उठती है। लगता है कि गहरी समाधि लगा कर उसमें से कोई ऐसा चमत्कारी मंत्र खोज निकालूं, जिसके अव्यक्त प्रभाव से ही यह धूमिल वातावरण शान्त हो जावे। हमारी प्रजा ही नहीं सारा संसार शान्तिका अनुभव करने लगे। राजा-रंक, धनी-गरीब, नीच-ऊँच, शासक-शास्य, उत्पीड़क-उत्पीड्य आदि विषमता के आधार पर बना एक भी गिरोह भारत में न रहे। सामाजिक व्यवस्थायें ऐसी सुव्यस्थित हों जिनके कारण प्राणीमात्र से घृणा करने का अवसर ही न आवे। सभी मानव अपने अपने कृत्यों को कर्तव्य समझ कर करें। परस्पर में प्रेमपूर्ण सहयोग और समता का भाव जागृत हो जावे। है क्या ऐसा कोई उपाय ?

त्रिशला—महाराज ! आप जो वातावरण चाहते हैं उसका बीज, उन्नायकके मानसमें अन्तर्निहित होता है। वह नायक किसी विद्यालय में नहीं गढ़ा जाता, न यह भाव लाने से कोई युगपरिवर्तक सेनानी ही हो सकता है। यह तो महासत्त्वों के स्वाभाविक आचरण में जन्मसे ही अङ्कित रहता है। ऐसे युगवीर महासत्त्व विश्व की विभूति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माने जाते हैं और उनको जन्म देनेवाली मातायें धन्या हो जाती हैं। महाराजा सिद्धार्थ आकुलित नेत्रोंसे देखते हुये बोले—देवि त्रिशले! क्या तुम्हारे हृदय में ऐसे महामानव को जन्म देने की भावना नहीं होती? क्या तुम्हारा हृदय संसार के इन अमानुषिक अत्याचारों को सुनते सुनते इतना कठोर हो गया है कि वह उस महासत्त्वका आह्वान न कर सके? क्या हमलोगोंका जीवन केवल विलासिताके लिये ही है? क्या हम इन दासोंको बाजारोंमें घास-फूसकी तरह बिकवाते रहेंगे? मुझसे पशुओंका करुण क्रन्दन अब नहीं सुना जाता, उनके रक्तकी आहुतिसे घ्राणेन्द्रिय फटी जा रही है। मांस-पेशियोंकी ज्वालासे उत्थित धूम्रस्तोमने मेरी आँखोंको पथरा दिया है। मेरी मानसिक दुर्बलतायें बढ़ती जा रही हैं। हमको शीघ्र ही उस महासत्त्वका आह्वान करनेमें जुट जानेका मनसा, वाचा कर्मणा प्रयत्न करना चाहिये।

महारानी त्रिशला—नाथ! महाराजाओंका कर्तव्य यही है जो आप सोच रहे हैं। मैं आपके इस विचारसे पूर्ण सहमत हूँ। मैं यह भी चाहती हूँ कि काश! हमारे प्रदेशमें ही वे महासत्त्व जन्म लेते तो यह प्रदेश उद्दीप्त हो उठता और अपने तेज से संसार का पथ प्रदर्शक बन जाता।

सिद्धार्थ—देवि! तुम्हारी यह सद्भावना शीघ्र सफल हो यही मेरी हार्दिक कामना है।

महारानी त्रिशलाको स्वप्नदर्शन

महाराजा सिद्धार्थ अपने संथागार में बैठे हुए गणों से परामर्ष कर रहे थे। सहसा अन्तःपुरकी ओरसे शीतल मन्द पवन का सुवासित झोका आया। महाराजका शरीर रोमाञ्चित हो गया। संथागारके हर पदार्थमें उन्हें नवीन छटा दृष्टिगोचर होने लगी। हृदयमें परितोषकी श्वास आने लगी। वे इस अचानक परिवर्तन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के रहस्य की छानबीन कर ही रहे थे कि उन्होंने महारानी प्रियं-कारिणी को अपनी परिचारिकाओं के साथ भवनमें प्रवेश करते हुए देखा। आजकी अनुपम छटा देख महाराज पुलकित हो उठे। वे अपने आसन पर एक क्षण के लिए भी स्थिर न रह सके। 'महारानी की जय' के नारे से संथागार गूँज उठा। समस्त गण खड़े होकर महारानी की अभ्यर्थना करने लगे। महारानी ने आकर महाराजा सिद्धार्थ को अभिवादन किया। महाराजा ने उन्हें अपने आसन पर बिठाकर कुशल वार्ता पूछी।

महारानी—महाराज! आपकी छत्रछायामें मुझे कष्ट कैसा! आप अत्यन्त प्रजावत्सल एवं गंभीरगवेषी हैं। जब आप प्रजा के सुख दुःख की अहर्निशि चिन्ता रखते हैं तो परिवार का सुख साधन तो प्रजाके साथ सुतरां हो जाता है। नाथ! आज मैं अचानक राजसभामें इसलिये उपस्थित हुई हूँ कि आषाढ शुक्ला षष्ठीको रात्रिके चतुर्थ याममें मुझे सोलह स्वप्न एक के बाद एक इस क्रम से हुए कि मेरा हृदय आश्चर्य से भर गया। मैं अपने को अपने में संवरण न कर सकी, प्रातःकालीन कृत्य के बाद एक क्षण भी अपने को अन्तःपुर में स्थिर न रख सकी। स्वप्न दर्शन के बाद ही मेरा शरीर और मानस इतना प्रसादपूर्ण हो रहा है कि ऐसा मेरे जीवनमें कभी नहीं हुआ। मैं आपके राजकार्यों की गम्भीरताका अनुभव करती हुई भी आपके समक्ष हठात् आ उपस्थित हुई हूँ। कृपया मेरे स्वप्नों को सुनने का कष्ट करें। तथा इन अनूठे स्वप्नों का क्या फल है, क्रमशः बताते चलें। मैं उनका फल जानने के लिए उत्सुक हूँ।

महाराज प्रसन्न होकर बोले—देवि त्रिशले! सोलह स्वप्न क्रमवार उसी सौभाग्यवती महिलारत्न को होते हैं जिसे महा-भाग्यशाली तीर्थङ्कर पुत्र की जननी बनने का सुअसर मिलता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुझे तुम्हारी स्वप्नवार्त्ताने आश्चर्य्यमें डाल दिया है शीघ्र सुनाओ, प्रथम तुमने क्या देखा?

महारानी—देव ! प्रथम स्वप्नमें मैंने देवेन्द्र के विशाल ऐरावत हाथीकी तरह एक चन्द्रमावत् उज्ज्वल हस्ती देखा। गजेन्द्र के गण्डस्थलसे झरनेवाले मदपर असंख्य भौंरे गूँज रहे थे। नाथ ! मुझे यह देखकर तो और भी आश्चर्य हुआ कि उन असंख्य भौंरों के मनोहारी शब्दों को श्रवण कर हाथी मस्त होकर झूम रहा था।

सिद्धार्थ शान्तिकी श्वास लेते हुए परम प्रसन्नतासे बोले—देवि त्रिशले ! तुम धन्य हो। हमारी चिन्ताओं का भार बस इसी स्वप्नने हलका कर दिया। जिस महासत्त्वकी इस समय भारी आवश्यकता थी उस महाप्राणके तुम्हारी कुक्षिको सनाथ करने का यह प्रबल संकेत है। मैं तो सोलह स्वप्नों की बात सुनकर ही समझ गया था कि अन्तिम चौबीसवें तीर्थंकरके जन्मका समय अत्यन्त सन्निकट है। चतुर्थ कालमें ७५, ७६ वर्ष बाकी रह गये हैं। महादेवि ! हम लोग आज पूर्ण भाग्यशाली हैं। हमारे राजप्रसाद में वह ज्योति आनेवाली है जिसके महाप्रभावसे संसारका सारा कष्ट दूर हो जावेगा। गजेन्द्रका शुभ्र वर्ण उस महाज्योतिकी पवित्रताका द्योतक है। असंख्य भँवरों को मदपान कराना ही उस महापुरुष का कृत्य होगा। वह अपनी ज्ञानधारासें अज्ञानियों को ज्ञान देकर उनका दुख दूर करेगा।

त्रिशला—दूसरे स्वप्न में एक बहुत बड़ा बैल देखा है। उसकी काँधोर विशाल और उन्नत थी। वह अपनी गगन-भेदी ध्वनिसे दशों दिशाओं को आपूरित कर रहा था। तथा उसके खुर पृथ्वी को बराबर करनेमें लगे थे।

सिद्धार्थ—इस स्वप्नका स्पष्ट फल यह है कि संसारकी विष-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मताएँ हटाकर वह महासत्त्व संसारमें समताका प्रचार करेगा और अपने दिव्य ज्ञानमय गगन-भेदी गर्जनों से दशों दिशाओं के प्राणियों को प्रतिबोधित करेगा।

त्रिशला—महाराज! तीसरे स्वप्नमें मैंने एक मनोहर केशरी को पर्वतके ऊपर समधरातल पर खड़े हुये देखा है। वह अपनी विशाल डाढों की शुभ्रतासे बनराईके अन्धकारको चीरता हुआ विशाल गर्जना कर रहा था।

सिद्धार्थ—देवि! तुम्हारा यह पुत्र निश्चित रूपसे चौबीसवाँ तीर्थंकर होगा और उच्चासन पर आसीन होकर संसारके अज्ञानको हटाकर धर्मसंकटसे असंख्य प्राणियों को बचावेगा। वह अपनी अहिंसाकी पताकाके नीचे असंख्य प्राणियों को आश्रय देगा।

त्रिशला—नाथ! चतुर्थ स्वप्न तो मुझे अभी तक आश्चर्य्यमें डाल रहा है। इस स्वप्नमें मैंने देखा है कि एक विकसित सहस्रदल कमल पर पूर्ण शृङ्गार किये हुए लक्ष्मी जी बैठी हैं और उनके दोनों बाजूमें दो मतवाले हाथी सूँडों से सुवर्ण कलश उठाकर उन्हें स्नान करा रहे हैं।

सिद्धार्थ—इस स्वप्नने पूर्ण निश्चय करा दिया कि वह महासत्त्व तीर्थंकर ही है, क्योंकि जन्म होते ही तीर्थंकरका अभिषेक करनेके लिये स्वर्गसे सपरिवार इन्द्रगण आते हैं। वे जन्माभिषेक कर तीर्थंकरके जन्मकल्याणकका अभूतपूर्व महोत्सव करते हैं। लक्ष्मीका अभिषेक इस बातका भी निश्चय कराता है कि वह महासत्त्व मोक्षलक्ष्मीका अधिपति होगा।

त्रिशला—महादेव! पांचवें स्वप्नमें आकाशमें लटकती हुई दो सुन्दर सुगन्धपूर्ण मालायें देखीं हैं।

सिद्धार्थ—इस स्वप्न का स्पष्ट अर्थ यह है कि वह महासत्त्व लोक अलोकमें रहनेवाले सम्पूर्ण पदार्थोंका ज्ञाता द्रष्टा सर्वतत्त्व-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेदी होगा। वह अपना पूर्ण विकास कर सर्वज्ञता प्राप्त करेगा।

त्रिशला—महाराज! छठवें स्वप्नमें मैंने पूर्णकलाओंसे परिपूर्ण उदीयमान सुन्दर बालचन्द्र देखा है। उसकी चन्द्रिकासे सारा संसार उद्दीप्त हो उठा था।

सिद्धार्थ—देवि! जिस प्रकार चन्द्रमाकी शीतल किरणें संसार को शान्तिदायक होती हैं उसी प्रकार तुम्हारा तीर्थंकर पुत्र प्राणी-मात्रको सुख देनेवाली ज्ञानकिरणें बिखेर कर न केवल शान्तिका अपूर्व वातावरण बना देगा अपि तु संसारसे ग्लानि, ईर्ष्या द्वेष आदि जीव घातक प्रवृत्तियोंको दूर करनेमें भी वह समर्थ होगा। सारे विश्वमें शान्तिकी समतामूलक क्रान्तिका प्रसारक तुम्हारा लाल होगा, इसमें जरा भी सन्देह न समझो।

त्रिशला—नाथ! मैंने सातवें स्वप्नमें पूर्व दिशासे अपनी स्वर्णिम किरणोंको बिखेरता हुआ मनोमोहक बालसूर्य्य देखा है। उस समय उसकी अलौकिक प्रभासे सारा अन्धकार विलीन हो गया था।

सिद्धार्थ—शुभानने! रात्रिके व्यतीत होते ही प्रभाशाली सूर्य्य अपनी किरणोंको, अभेदभावसे जगत्‌का घनान्धकार दूर करनेके हेतु, विकीर्ण करता है। तुम्हारा महासत्त्व भी अपनी विशाल ज्ञानधाराको प्रवाहित कर संसारके प्राणियोंको उस से भर देगा। वह समताका ऐसा सुन्दर पाठ पढ़ावेगा कि सारा संसार शान्ति एवं आत्मीय ज्योति का प्रकाश पाकर अपने पथका स्वयं निर्माता बनेगा।

महारानी त्रिशला—देव! आठवें स्वप्न में मैंने दो चपल मछलियाँ पानी में किलोल करती हुई देखी हैं। उन्हें देखकर मेरा मन बड़ा आह्लादित हुआ है। उसका वर्णन मैं शब्दों से नहीं कर सकती।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महाराजा सिद्धार्थ—देवि त्रिशले ! तुम्हारा तीर्थङ्कर पुत्र ऐह-लौकिक क्रियाओं से लौकिक प्राणियों का प्रेमभाजन बनेगा और पारलौकिक साधनसे परिपूर्ण होकर जीवोंको मोक्षमार्गका सुन्दर प्रदर्शन करेगा। वह पूर्ण स्वतंत्र होकर अनन्त काल तक आत्मसुखका आस्वाद करनेवाला होगा।

महारानी—राजन् ! नववें स्वप्नमें मैंने स्वच्छ जलसे भरे हुए दो विशाल सुवर्णकलश देखे हैं। उनके चारों ओर सुन्दर कमलोंके गुच्छक अपनी सुगन्धसे भ्रमरोंको अभितृप्त कर रहे थे।

महाराजा—प्रियदर्शने ! पूर्ण कुम्भोंका दर्शन स्पष्टतया इस बातकी घोषणा कर रहा है कि तुम्हारे पुत्रके प्रभावसे यहाँ अक्षय निधियोंकी कोई कमी न रहेगी। संसारकी अलौकिक निधियोंका भंडार तुम्हारा निवास भवन बनेगा।

महारानी—देव ! दशवें स्वप्न में मैंने एक ऐसा विशाल सरो-बर देखा है जिसमें असंख्य कमल खिले हुए थे और सुन्दर पक्षियों के मधुर गीत सुनाई पड़ रहे थे। तालाबका जल मुनियों के अन्तर्मानसकी तरह अत्यन्त विमल प्रतीत हो रहा था।

सिद्धार्थ—आर्ये ! तुम्हारे पुत्रके शरीरमें सामुद्रिक शास्त्रमें बताये हुए महामानवके सारे लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर होंगे। तीर्थङ्करके समस्त अन्तरंग लक्षणोंसे उसका मानस परम उदार और विशाल होगा। जीव मात्र पर उसकी समदृष्टि होगी। विषमताका लेशमात्र भी उसके हृदयमें स्थान न पा सकेगा।

महारानी—आर्य्यपुत्र ! ग्यारहवें स्वप्नमें मैंने एक ऐसा विशाल समुद्र देखा है जिसमें नाना प्रकारके मणि, बड़े बड़े मोतियोंके पुंज एवं विद्रुमोंके गुच्छक उसकी विशाल तरंगों पर उछलते हुए दिखाई दे रहे थे तथा बड़े बड़े मगर मच्छ परस्पर में क्रीड़ा करते हुए ऐसे लग रहे थे कि मानों वे सब समुद्रके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

औरस पुत्र ही हैं।

महाराजा—वल्लभे ! तुमने जो अपनी उत्ताल तरंगोंसे मणिमुक्तादि महारत्नों को विखेरते हुए अगाध समुद्र देखा है उससे स्पष्ट है कि तुम्हारा तीर्थंकर पुत्र अगाध ज्ञानका भंडार होगा। उसका ज्ञान अनन्तमय ज्ञानरूप लहरिओं से व्याप्त होकर वस्तुतलमें रहनेवाले अनन्त गुण-धर्मोंका प्रदर्शक होगा। वह वादी प्रतिवादियोंके सन्देहोंका निराकरण कर उन्हें अपने दिव्य-ज्ञानसे वस्तुओंका यथार्थ रेखाचित्र वतायेगा। फलस्वरूप वे पर-स्परके द्वेषको छोड़ कर और सत्यज्ञानका आलोक पाकर अनन्त संसारसे पार होनेका प्रशस्त मार्ग पा सकेंगे।

महारानी—प्रियदेव ! मैंने बारहवें स्वप्नमें एक ऐसा विल-क्षण सिंहासन देखा है जिसके चारों पाये विशाल केशरियोंकी पीठ पर सुशोभित थे। वह नाना-देदीप्यमान मणियोंकी किरणों से व्याप्त चौतरफा लगी झालरोंसे अपनी अपूर्व छटा विखेर रहा था।

महाराज—भाग्यशालिने ! तुम यह निश्चय समझो कि तुम्हारा तीर्थंकर पुत्र निर्भय होकर सर्व प्रथम अपनी आत्माका पूर्ण विकास करेगा। अनन्तर देव दुर्लभ सिंहासन पर आरूढ़ होकर अपने दिव्यज्ञानरूपी किरणोंसे मुमुक्षु प्राणिय़ोंको पूर्ण स्वतत्रता के मार्ग में लगा कर उन्हें सच्चा आत्मसुख प्रदान करेगा।

महारानी—दिव्यदृष्टे ! मैंने तेरहवें स्वप्नमें निर्मल व्योममें उड़ता हुआ एक विलक्षण विमान देखा है। उसके चौतरफा बड़ी बड़ी मोतियों कि झालरें लटक रही थीं जिनकी प्रभा से स्वच्छ नभोमण्डल उद्दीप्त हो उठा था।

सिद्धार्थ—महादेवि ! इस स्वप्नका फल स्पष्टतया यह घोषणा कर रहा है कि तुम्हारा पुत्र परम वीतराग होगा। उसकी दृष्टिमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शत्रु-मित्र, सुख-दुख, निन्दक-प्रशंसक, विपिन-भवन, और सुवर्ण कंकड़ आदि सभी पदार्थ समान होंगे। उसे न तो भोगोपभोगादि सामग्रीमें ममता होगी, न संसार के किसी पदार्थ से द्वेष होगा। वह संसार भरके जीवों का कल्याण चाहनेवाला होगा। उसके हृदयमें विषमताको किसी रूपमें भी स्थान न मिलेगा।

त्रिशला—धीमन्! चौदहवें स्वप्नमें मैंने धरेणन्द्रके विशाल भवनको पृथिवीके गर्भसे निकलते हुए देखा है। उसमें बैठी हुई अनेक नागेन्द्र कन्यायें सुन्दर गीत गा रही थीं और उसके चारों ओर बड़ी बड़ी देदीप्यमान मणियाँ लटक रही थीं जिनकी प्रभासे भूमण्डल उद्दीप्त हो उठा था।

महाराज—भद्र देवि त्रिशले! नागेन्द्र भवनका पृथिवीसे निकलना यह बात द्योतित करता है कि तुम्हारा पुत्र इसी शरीर से कर्मोंके जंजालको तोड़कर अक्षय सुखका निधान बन सिद्धासनको सुशोभित करेगा और उसकी यशोगाथा अनन्तकाल तक संसारके प्राणियोंका उद्धार करती रहेगी।

त्रिशला—नाथ! पंद्रहवें स्वप्न में मैंने संसारको आश्चर्य में डालनेवाली एक गगनचुम्बी रत्नोंकी राशि देखी है। उसकी प्रभाने संसारके अन्धकारको क्षणभरमें नष्ट कर दिया था।

महाराज—देवि! इस शुभ स्वप्नका एकमात्र फल यही है कि तुम्हारा पुत्र बिना किसी भेदके शरणमें आये हुए प्राणियों को अपने दिव्य तेजसे भर देगा और बिना किसी भेदभाव के अनन्त जीवों पर अपनी तपःपूत किरणोंका प्रकाश डालकर उन्हें सन्मार्गका पथिक बनावेगा।

त्रिशला—महाराजाधिराज! मैंने सोलहवें स्वप्नमें ऐसी सुन्दर निर्धूम अग्नि देखी है जिसकी प्रभासे संसारके प्राणी परम आमोद का अनुभव कर रहे थे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महाराज—महारानी त्रिशले ! यह बात अब बिलकुल निःसन्देह स्पष्ट होगई कि तुम्हारा पुत्र ध्यान रूप अग्निसे कर्मोंको जलाकर अर्हंत अवस्था प्राप्तकर अक्षय धामका अधिपति बनेगा।

इस तरह सोलह स्वप्नोंका फल सुनकर सामन्त, संथागार एवं ज्ञातृगणतंत्रके समस्त उपस्थित सज्जन आनन्द विभोर हो गये। उन्होंने गणनायक सिद्धार्थसे निवेदन किया- देव ! आप की आज्ञासे हम लोग चौबीसवें तीर्थंकरके गर्भकल्याणकका महोत्सव पूर्ण उत्साह से मनाना चाहते हैं। प्रधान अमात्य ने प्रजावर्गके स्वरमें स्वर मिलाया। गणनायकने सोचा कि वातावरणमें परिवर्तनके सारे लक्षण स्पष्ट दिखाई देने लगे हैं। क्यों न ऐसा अवसर दिया जाय, जिससे जनताके हृदयोंमें उस महामानवके आगमनकी उत्कंठा पूर्वक प्रतीक्षा करनेकी भावना जागृत हो उठे। इससे समस्त प्रजामें एक प्रशान्त वातावरण उपस्थित हो जावेगा और धर्मविद्वेषकी विषमाग्नि प्रशमित होने लगेगी। इससे मूक प्राणियोंकी आहुतियोंमें भी परिवर्तन होगा। मैं नहीं चाहता कि किसी भी धार्मिक कृत्यमें राज्यकी ओरसे विषमताकी नीति वर्ती जाय। मैंने आज तक पुरोहितोंके चक्करमें आकर अपने क्रियाकांडों पर अपौरुषेय वेदकी छाप लगवाकर प्रजा जो करती आ रही थी उसे करने दिया। मैंने कभी भी किसी धर्मकी क्रियाओंमें हस्तक्षेप नहीं किया, क्योंकि मैं जानता हूँ कि प्रजाका धर्म राजा माने, या न माने, पर राज्यकी ओरसे किसी भी धर्मका बहिष्कार करना, राज्य शासनकी अभेद नीतिपर कुठाराघात है। जनता स्वयं ही महोत्सव करनेका प्रस्ताव कर रही है तब मुझे आपत्ति ही क्या है।

इस समाचारके नगरमें फैलनेमें देर न लगी। लोग आपसमें चर्चा करने लगे कि हम लोगोंने कभी ऐसा सुन्दर जमाना नहीं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देखा, जैसा छह माह पूर्वसे दीख रहा है। इस वर्ष ऐसी फसल हुई कि घरमें उसे रखनेके लिए स्थान नहीं है। गाय भैंसोंको हर वर्ष जेठ-आषाढ़ मास के प्रारम्भ होते ही नाना वीमारियाँ आ घेरती थीं। आषाढ़ मासके लगते ही सैकड़ों पशु वीमारीसे परेशान हो जाते थे। पानीका अभाव और घास चारेका दुष्काल उनकी दशा दीन से दीनतर बना देता था। आश्चर्य है इस वर्ष आषाढ़के प्रारम्भ होते ही मजेका पानी बरस रहा है। सब जगह रोपा जम गया है। सारे प्रदेशमें हरी हरी घासका कालीन बिछ गया है। आम और लीची तो इतने आये कि मनुष्योंकी तो बात क्या पशुओं तक ने आकण्ठ खाये फिर भी अभी तक वृक्षों पर लदे पड़े हैं। इन सब बातोंसे हमलोगों को तो महारानीजी के स्वप्नोंका फल स्पष्ट दिखलाई देने लगा है।

जिस समय जनता यह उत्सव मना रही थी, उसी समय आकाशमें जय जयकी ध्वनि सुनाई देने लगी। आकाश प्राङ्गण में भेरियों, सहनाइयों तथा झाँझ मजीरोंके सुन्दर शब्द सुनाई देने लगे। सारी भूमि आनन्दसे नाच उठी। गणनायक सिद्धार्थने जगह जगह दान-शालायें खोल दीं, सारी जनताके सुख साधन अधिनायककी ओरसे वितरित होने लगे। समस्त जनताको अभूतपूर्व सुखका अनुभव होने लगा। प्रजावर्गको निश्चित हो गया कि महारानी त्रिशला देवीकी कुक्षिमें कोई महासत्त्व अवश्य विराजमान है, अन्यथा ऐसी सुख साताका प्राप्त होना सुलभ नहीं था।

इस आमोद-प्रमोदमें नव मास बीत गये। ये नव मास प्रजाको नव दिनकी तरह प्रतीत हुए। हर समय आमोद-प्रमोद और शान्तिमय वातावरण बना रहता था। कहीं भी वर्ण विद्वेष, जाति विद्वेष और धर्मविद्वेषको स्थान नहीं रहा था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महाराज सिद्धार्थकी विलक्षण स्थिति थी। वे अपने आप में अपूर्व शान्ति का अनुभव कर रहे थे। प्रजावर्ग को गणतन्त्र के सुख का पूर्ण अनुभव होने लगा था। सब जगह अमन चैन की बंशी अपनी सुरीली तान से जनता को बेसुध कर रही थी। सर्वत्र शान्तिका साम्राज्य था। महारानी त्रिशला का आनन्द सागर उत्ताल तरङ्गें ले रहा था। उनकी परिचारिकायें महारानीकी अलौकिक प्रतिभा और रूपराशि पर विमुग्ध थीं। महाराजा सिद्धार्थ एक एक दिन गिन रहे थे। उन्हें अपने मनोरथ पूर्ण होने के सारे आसार नजर आ रहे थे। हुताशन का धूमकेतु अभी भी कभी कभी आकाश में मँडरा जाता था। कभी कभी भीषण ज्वाला के दर्शन भी दूर, बहुत दूर से उन्हें हो जाते थे। उन्हें महामानव का शीघ्र अनुदय खटकने लगा था, पर चारा क्या था। फल तो समय पर ही फलेगा, यह सोचकर वे मन मसोस कर रह जाते थे।

चैत्र शुक्ला त्रयोदशीके प्रातःकाल सौधर्म इन्द्रकी सभामें इन्द्र का आसन अचानक हिलने लगा। देव सभा आश्चर्यान्वित हो सोचने लगी कि इन्द्रका आसन कम्पित होनेका क्या कारण है, क्या किसी महान् अनर्थकी सूचना तो यह नहीं है? इतनेमें सौधर्मेन्द्र सिंहासनसे उठे और सात पद चलकर उन्हों ने उस दिशाकी ओर नमस्कार किया। इन्द्रके जयघोषने सभा भवन गुँजा दिया। देव-सभाने विनम्र होकर पूछा देवेन्द्र! कृपया बतावें कि आपका आसन क्यों कम्पित हुआ? आपने आसन छोड़कर किसे नमस्कार किया और आपके जय जय शब्द करनेका क्या कारण है। आप किस महाज्यातिके जयघोषसे दिशायें प्रकाशित कर रहे हैं?

सौधर्मेन्द्र—प्रियदर्शी देवगण! आज हमारे देवेन्द्र पद के सार्थक होने का समय आ गया है। जम्बूदीप के दक्षिण दिशा में भरतक्षेत्र है। उसमें पाँच म्लेच्छखण्ड और छठवाँ आर्यखण्ड है।

२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसमें अनादि काल से आर्य्य लोगों का निवास है। वहाँ वर्तमान काल में भगवान् ऋषभदेव से लगाकर पार्श्वनाथ तक २३ तीर्थङ्कर आत्मधर्म के प्रकाश हो गये हैं। वहीं वैशाली के पास कुंडग्राम नाम का नगर है जो अत्यन्त रमणीय एवं सज्जनों के उज्वल चरित्र से दर्शनीय स्थान बना हुआ है। उसी कुण्डग्राम में गणनायक सिद्धार्थ न्यायनीति से जनता का नेतृत्व करते हैं। उनकी शील संयमादि से विभूषिता परम पवित्रहृदया त्रिशला नाम की महारानी हैं। उनकी कुक्षि से चौबीसवें तीर्थङ्कर का इसी समय जन्म हुआ है। इस कारण मेरा सिंहासन प्रकम्पित हुआ है, क्योंकि यह अनादि स्वभाव है कि जब ऐसे पुण्य पुरुषों का जन्म होता है तब स्वयमेव ऐसे आश्चर्य होते हैं। सूचना पाकर मेरा अन्तिम तीर्थंङ्कर को प्रणाम करना उचित ही था।

उन्हीं तीर्थंकर भगवान की जय बोलकर मैं आपलोगों को भगवान् के जन्म कल्याणक महोत्सव को सम्पन्न करने के लिए चलने की सादर सूचना दे रहा हूँ। कृपया आप सब लोग तैयार होकर शीघ्र चलिये। तब तक मैं सभी देवेन्द्रों का आह्वान करता हूँ।

क्षण भरमें सौधर्म स्वर्ग भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी एवं कल्पवासी देवों से आपूरित हो गया। देवेन्द्र अपने साथी देवोंको और अपनी पत्नी शचीको साथ लेकर कुण्डग्राम आये। वहाँ आकर नगरकी तीन प्रदक्षिणा इस आशयसे देनी प्रारम्भ की कि भगवन्! ऊर्ध्वलोक—स्वर्गलोक में भ्रमण करने पर मैंने आप जैसा प्रतिभाशाली महामानव नहीं देखा, मध्यलोकमें आप जैसा दूसरा महामानव वर्तमान कालमें नहीं है और पाताललोकमें तो हो ही नहीं सकता।

तीन प्रदक्षिणा देकर शचीपति अपनी देवमण्डलीको आकाश

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में स्थित कर शचीको साथ ले गणनायक सिद्धार्थ के प्राङ्गण में पहुँचे तथा महाराजा का यथायोग्य विनय सत्कार कर अपनी शची को अन्तःपुर में तीर्थङ्करदेवको लाने के लिए भेजा।

चतुर इन्द्राणी ने माता को प्रणाम कर उन्हें अपनी देवमाया से निद्रित कर दिया। तथा बाल्यरूप तीर्थनाथ को गोद में उठा कर वहाँ मायामयी बालक को लिटा दिया। जिस समय शची ने भगवान् की कमनीय रूपराशि देखी तो सहसा उसके मुँह से निकल पड़ा—

धन्याऽस्मि !

आज मैं धन्य हो गई, क्योंकि भगवान् तीर्थङ्कर देव का मुखारविंद सर्व प्रथम मुझे ही देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वह भगवान् की दिव्य आकृति को पुनः पुनः निहारती हुई सहसा पुनः बोल उठी—

अहो पुण्यनिलयाऽस्मि !!

अहह ! आज मैं पुण्य का पवित्र मन्दिर हो गई। साक्षात् मोक्षमार्ग के प्रतिपादक और संसार भर के प्राणियों को समता का पाठ पढ़ानेवाले जगद्गुरु आज मेरे अङ्क को पवित्र कर रहे हैं। मेरा इससे अधिक अन्य सौभाग्य क्या हो सकता है। यह कहकर वह भगवान् तीर्थंङ्कर की सलौनी आँखों में अपने अतृप्त नयन गढ़ाकर अपनी रूपरेखा का अध्ययन करने में तन्मय हो गई। उसी समय उसकी अन्तर्मानस की पवित्रता का साक्षी यह वाक्य निकल पड़ा—

निराकुलाऽस्मि !!!

आज में निराकुल हो गई। अब मेरी संसारकी सारी वासनायें शान्त हो गईं। अब मुझे संसार के किसी पदार्थ की इच्छा नहीं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रही। साक्षात् स्वातंत्र्यप्रदाता ज्योतिःपुञ्जने मेरी आत्मविवशता के अखिल बन्धन काट दिये। आज मैं पूर्ण स्वातंत्र्य प्रदर्शक सूर्य का अज्ञान निरोधक प्रकाश पा गई। ऐसी उज्ज्वल ज्योति का दर्शन मुझे अन्यत्र दुर्लभ है।

इस अपूर्व आनंद का प्रत्यक्ष अनुभव करती हुई शची बालक तीर्थङ्कर को अङ्क में लेकर भावोद्रेक से नृत्य करती हुई इन्द्र के सामने उपस्थित हुई। इन्द्र भगवान् की विमल रूप राशि और विश्व कल्याणकारी प्रभावली को देखकर रोमाञ्चित हो गया। उसने भगवान् के शारीरिक लक्षणोंको युगपत् दृष्टिपथ में लाने के लिये अपने सहस्र नयन पसार लिये और अनिन्द्य लक्षणावली का गंभीरता से अध्ययन करने लगा।

इन्द्र भगवान् के शारीरिक लक्षणोंको देख ही रहा था कि उसकी दृष्टि सहसा भगवान् के दक्षिण अङ्गुष्ठ पर जा टिकी। उसने गम्भीरता से अङ्गुष्ठ चिन्ह को देखकर निश्चय किया कि यह चिन्ह विशाल केशरी का ही है। यह सब देखकर उसने अपने आन्तरिक प्रमोद के साथ भगवान् महावीर के जयनाद से दशों दिशाओं को भर दिया—

आगत चतुर्निकायके देवों एवं उपस्थित जनताने भी समवेत स्वरसे कहा—

भगवान् महावीरकी जय

इन्द्रने भगवान् महावीरको गोदमें लेकर और ऐरावत हाथीपर आरूढ़ हो पाण्डुक वनकी ओर प्रस्थान किया। तथा वहां पहुँच कर और अभिषेक कर बालक महावीरको सुन्दर वस्त्राभूषण पहराये। फिर वहांसे गान नृत्य करता हुआ कुण्डग्राममें आया। और त्रिशला-माताके अङ्कमें तीर्थंकर महावीरको देकर बोला—जगज्जननि! तुम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धन्य हो। तुम्हें ऐसे प्रभावशाली पुत्ररत्नको जन्म देनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। निःसन्देह आपका जीवन धन्य है। बालप्रभु के लालन-पालनमें आपको हमारी पूर्ण सहायता मिलती रहेगी। आपने संसारमें मातृकुलकी प्रतिष्ठा बढ़ा दी है। आपने महिला समाजके जीवनको अपनी गरिमासे इतना समुज्ज्वल बना दिया है कि विश्व के प्राणियोंकी दृष्टियाँ आपके चरणारविन्दमें झुक गईं हैं। तीर्थंकर देवकी माता कहला कर आपने स्त्रीपर्य्यायकी सार्थकताका अनुपम उदाहरण संसारके समक्ष उपस्थित किया है।

यह सौभाग्य पूर्व तपस्याके बिना दुर्लभ है। आपके जिन पुण्य परमाणुओंने भगवान् तीर्थंकर देवके आधिभौतिक शरीरके निर्माण में अपना योग दिया है वे धन्य हो गये। आपके द्वारा समर्पित इसी तनसे महावीर संसारके अनन्त प्राणियोंके क्लेश मिटावेंगे और इसकी गरिमाका संसारको अनुभव करावेंगे।

इस प्रकार माता त्रिशलाकी प्रशंसा कर इन्द्र, महाराजा सिद्धार्थ के संथागारमें गया और वहां महाराजा सिद्धार्थको अभिवादन कर बोला—राजन्! अब आपकी सारी चिन्तायें निर्मूल हो गयीं। जग-द्गुरुने आपके प्राङ्गणमें अभयपद कल्पवृक्ष प्रस्थापित कर दिया है। अब संसारके सभी अत्याचार विलीन हो जावेंगे। मानवता अपने नये कलेवरसे उद्दीप्त हो उठेगी। संसारके प्राणी शान्तिकी श्वास लेने लगेंगे। भव-वनमें भटकते हुए प्राणियोंको स्वातन्त्र्य पथ दीखने लगेगा। हिंसाका मार्ग अवरुद्ध होकर मानवोंकी दानवता समाप्त हो जावेगी। इसमें आप अब जरा भी सन्देह न करें। यह आर्हत दर्शनका चौबीसवाँ अवतार है। जब जब तीर्थंकर धराधाममें पधारे हैं तब तब सत्यके आलोकमें दया, अहिंसा और समताका अपूर्व प्रसार हुआ है। आपकी भावना सफल हो गई। आपके अपूर्व पुण्यसे भगवान् महावीरने अपने जन्म द्वारा कुण्डग्रामको सनाथ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किया है। इनकी लोक कल्याणकारी भावनाका ही यह प्रताप है कि मैं स्वर्गसे आपकी नगरी तक खिंचा चला आया हूँ। आज हमारी देवपर्य्याय सफल हो गई। इस प्रकार महाराजकी प्रशंसा कर इन्द्र सपरिवार अपने धाम लौट गये।

भारतीय बन्धुओ एवं विहारी मित्रो !

वही पुण्यस्मृतिका आज पावन दिवस है। भगवान् महावीरके उपासको ! इसी वैशालीमें भगवान् महावीरका जन्म हुआ था। आप लोगोंके क्षत्रिय वंशको ही यह गौरव मिला था।

आप लोगोंने वीरताकी उपासनाके साथ ज्ञानकी गरिमाको अनुभव करते हुए सदा निरीहताको प्रश्रय दिया है। विचार कीजिए कि आज आप किस ओर जा रहे हैं। अपनी राग लिप्साके साथ अपने आर्थिक दृष्टिकोणको भी गम्भीरतासे विचार कीजिए। अनन्त काल संसारकी माया-ममतामें उलझे रहना, आपका उद्देश्य कभी नहीं रहा है। भगवान् ऋषभदेवसे भगवान् पार्श्वनाथ तक आपको सदा वीतरागताका महत्व सुननेको मिलता रहा है। इन्द्रिय-जय और मनोनिग्रह यही एक मात्र आपका लक्ष्य रहा है। किन्तु आज !

आज तो आपके दृष्टिकोणका लक्ष्य ही बदल गया है। आज आपकी दृष्टि भौतिक पदार्थोंके चाकचिक्य में ही उलझ गई है। आपकी दृष्टिमें हर पदार्थ व्यवहारका केन्द्र बन गया है। आपकी उपासना सदा वीतरागभावको बढ़ानेवाली मानी जाती रही है। उसका प्रत्येक पद आपको वीतरागताका पाठ पढ़ाता रहा है। पर आज आप उससे भी ऐहिक सुखों की वांछा करने लगे हैं। क्या यही आपके वीर धर्मकी रूप रेखा थी ? जरा अपने वर्तमान कर्तव्योंका और वीर शासनका तुलनात्मक अध्ययन तो कीजिये। तब आपको अपने वास्तविक स्वरूपका भान होकर यह ज्ञात होगा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कि आपका पथ क्या था और आज आप क्या करने जा रहे हैं? भगवान् महावीरने अपने जीवनमें क्या किया ? उन्होंने प्राणी-मात्रको स्वतंत्र बनानेके लिये अपने जीवन कालमें क्या आदर्श उपस्थित किये इसका दिग्दर्शन आपको निम्नांकित पंक्तियोंमें मिलेगा।

बाल्य-जीवन

माता त्रिशलाने जब बालक वर्द्धमान को इन्द्राणीके अङ्कसे अपनी गोदमें लिया तब उन्हें अनुभव हुआ की तीनों लोकों की अक्षयनिधि साकार रूप लेकर मेरे अङ्कमें आ गई है। माताने इन्द्राणी को वक्षःस्थलसे लगा लिया। महाराजा सिद्धार्थ पुत्रस्नेह की गरिमामें आत्मविभोर हो गये। उनका सारा शरीर पुलकित हो उठा। पुत्रके जन्मोत्सवके समाचार मित्र गणनायकोंके पास भेजे गये ; फलस्वरूप अङ्ग-बङ्ग-कलिङ्ग आदि देशोंके महीपति तीर्थंकरका जन्मोत्सव देखनेके लिए बड़ी उत्सुकतासे आये।

कलिंगाधिपति जितशत्रु भी अपनी महारानी यशोदयाके साथ आये। यशोदया महाराजा सिद्धार्थ की बहिन थीं, अतः उन्होंने बड़े उत्साह और वैभवसे जन्मोत्सवमें अपना प्रमोद प्रकट किया और बालक वर्द्धमानका प्रभामण्डल युक्त आनन देखकर अपने मनमें एक निगूढ़तम संकल्प किया।

गणनायक सिद्धार्थने एवं ज्ञातृ संथागार की जनताने अपने खजाने खोल दिये। किमिच्छक दान दिया जाने लगा। वैशालीके आश्रित गणतंत्रोंमें एक भी भिखारी या दीन दुखी न रह गया। सारी जनताके प्रमोदयुक्त भावोद्रेकसे यह महोत्सव महीनों तक चलता रहा।

ज्योतिषियोंने जन्मकुंडली बनाई। गणनायकोंने जन्मकुंडली का फल सुनकर परम प्रसन्नताका अनुभव किया। सिद्धार्थको तो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पहलेसे ही विश्वास था कि मेरा सद्यःप्रसूत नेता अन्तिम तीर्थङ्कर है।

बालक वर्द्धमानके छह मासके होने पर उन्होंने भूमि पर धीरे धीरे पग रखना प्रारम्भ किया। उनके अनेक समवयष्क साथी बालक नित नये वेशमें आकर राजप्राङ्गण को भरने लगे। इतना ही नहीं, बालक महावीर की बालक्रीड़ा देखनेके लिए राजप्रासादमें महिलाओं की भीड़ होने लगी। यह बालक ६–७ माहमें कितना सुन्दर चलने लगा तथा कितना सुन्दर और स्पष्ट बोलने लगा यह देखकर सबको आश्चर्य होने लगा। किन्तु उनके माता-पिता को दृढ़विश्वास था कि ये बाल्यवयसमें भी जगद्गुरु हैं। ये पूर्व संस्कार वश जन्मसे ही मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान सम्पन्न हैं। इन्हें कौन चलना सिखा सकता है तथा इनको भाषाके ज्ञान कराने की क्षमता भी किसमें है? वस्तुतः ये समस्त कलाओंके स्रष्टा हैं।

कालक्रमसे बालक महावीर खेलने लगे। उनके साथ कभी इन्द्र और कभी इन्द्रके साथी देव बालकके समान रूप धारण कर उनकी सेवाके भावसे खेलते, कभी मिलकर गोष्ठी करते और कभी माता-पिता को प्रसन्न करते।

जब बालक महावीर आठ वर्षके हो गये तो सिद्धार्थने उनके लिए विद्वानोंके संरक्षणमें ज्ञानगोष्ठीकी व्यवस्था की। परन्तु विद्वानों के गूढ़से गूढ़ प्रश्नोंको जब बालक महावीर बातकी बातमें हल कर देते तो विद्वानों को यह जानकर बड़ा आश्चर्य होता कि अभी तक महावीरने यह विद्या ही नहीं सीखी जिसकी चरचा हमने यहाँ की है। पर इन्होंने इतना सुन्दर एवं भावपूर्ण उत्तर कहाँ से दिया! क्या इन सब विद्याओंका परिचय इन्हें पूर्व संस्कार से ही है या फिर इनका इतना विशद दृष्टिकोण है कि ये आँखों से ओझल पदार्थोंका भी प्रत्यक्षकी तरह अनुभव कर लेते हैं। वे शब

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कलाकी कोई गहरी बात पूछकर और उसका उत्तर पाकर यह मानने में जरा भी नहीं हिचकिचाते कि महावीरका ज्ञान केवल इन्द्रियज ही नहीं है। इन्हें इन्द्रियातीत पदार्थोंका भी दिव्य ज्ञान है। वे अपने मनके विकल्प को मिटानेके लिए नाना प्रश्न करते और उसका यथार्थ उत्तर पाकर बड़े प्रसन्न होते।

जब माता बालक महावीरको भोजनके समय आया न देख घबड़ातीं तो एक क्षणमें ही वे अपने सामने उन्हें देखकर पूछतीं, वीर! हम तो प्रतिहारीको तुम्हें बुलानेके लिए भेज रहे थे। तुमने कैसे जान लिया कि मैं तुम्हारी याद कर रही हूँ? तब महावीर हँसकर माताको आल्हादित कर देते।

एक दिन बालक महावीर नगरके बाहर उद्यानमें अपने समवयष्क बालकोंके साथ खेल रहे थे। इतनेमें दो महर्षि मन ही मन किसी तत्त्व की गवेषणा करते हुये चले आ रहे थे। जिस तत्त्वपर उनका विचार चल रहा था उसे शीघ्र सुलझता न देख वे आपसमें उसकी चर्चा करते हुये वहीं किसी शिलाखण्ड पर बैठ गये। बालक महावीर भी अपने शखाओंके साथ वहां आकर खड़े हो गये।

तत्त्व चर्चा का विषय जटिल होनेसे दोनों योगी किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँच रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि बालक महावीरपर पड़ी और बालककी अद्भुत प्रभाके प्रकाश में उन्हें अपनी गम्भीर गवेषणाका निष्कर्ष प्रत्यक्षसा दीखने लगा। तब वे दोनों उठकर बोले—'वत्स! कान्यक्षराणि भवन्नाम्नालंकृतानि'—आप के शुभ नामने किन अक्षरोंका गौरव बढ़ाया है?

बालक महावीर मुस्कराये। उन्होंने कोमल स्वरमें कहा—वर्द्धमान इति—मुझे सब वर्द्धमान कहते हैं। ऋषियों ने अङ्गोंके सङ्गठन और हृदय पर उभड़े हुये कौस्तुभमणिके चिन्हसे उनको अलौकिक महापुरुष समझकर उनकी प्रशंसा करते हुए कहा महाभाग!

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आपके यहाँ उपस्थित होते ही हमारे तत्त्वकी गहरी उलझन आसानीसे सुलझ गई। हमारा विश्वास है कि आप मोक्षमार्ग के परमोपदेष्टा चौबीसवें तीर्थंकर हैं। बालक महावीर बोले—महर्षियो! अनन्त ज्ञेयोंका ज्ञाता दृष्टा स्वयं आत्मा है। आत्मा ही अपना गुरु है। आपके दिव्य ज्ञानने यदि उलझनको सुलझा लिया तो इसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है? अप्पा अप्पेण मुच्चई—आत्मा अपने उद्धार का मार्ग खुद ही निर्माण करता है और स्वयं ही स्वतंत्र होता है। निमित्त उपादान में शक्ति प्रदान नहीं करता, क्योंकि शक्ति का मूल श्रोत उपादान है। परावलम्बन को सहारा मानकर आत्मोद्धारकी वांछा करना आत्माकी शक्तिपर अविश्वास करना है।

दोनों महर्षि बालक वर्द्धमानके इस कथनसे आप्लावित हो गये और अपनेका धन्य अनुभव करते हुये यथेच्छ विहार कर गये।

बालक महावीरके कुछ और बड़े होने पर उनका जनतासे धीरे धीरे सम्पर्क बढ़ने लगा। गणतंत्रमें होनेवाले समाचारोंसे वे प्रतिदिन अवगत होने लगे। वे धर्मके नाम पर होनेवाले पापाचारकी या जीवहिंसा की बात सुनकर चिन्तित हो परिहारका मार्ग ढूंढ़ने लगे।

कभी कभी तो अपने प्रकोष्ठ में बैठे बैठे वे घण्टों यही सोचते रहते कि इन असदाचारों का निराकरण कैसे किया जाय। जब कभी उनके सामने यह सुझाव आता कि आप गणतन्त्रके उत्तराधिकारी युवराज होकर भी युग प्रवर्तक हैं। शक्ति का सहारा लेकर इसे क्यों नहीं रुकवाते? तब वे स्पष्ट शब्दों में कहते, धर्म आत्मा की चीज है। आत्माकी विचारधारा बदले बिना कोई भी जीव सदाचारी नहीं हो सकता। दंड व्यवस्था सामाजिक न्यायका एक प्रकार है पर धार्मिक भावना बल प्रयोग से नहीं बदली जाती। कोई भी अनुशासन उसे बदलनेमें आजतक समर्थ नहीं हो सका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है और न होगा। यदि हम गुरुओं की विनय करते हैं तो हमारा यह शिष्टाचार है। जबरन विनय कराना हृदय परिवर्तनके बिना सम्भव नहीं है। जनताकी धार्मिक भावना बदलनेके लिए उसके हृदय पर यह अंकित करना होगा कि उसका यथार्थ हित किसमें है। यदि उसके हित और स्वार्थ का ज्ञान उसे हम न करा सके तो इस दिशामें नरम या गरम कोई भी आज्ञा उसकी धार्मिक भावना के बदलनेमें सहायक नहीं हो सकती। जो धर्मनीतिके इस मर्मको नहीं समझता और धार्मिक कार्योंमें हस्तक्षेप करता है वह सफल शासक नहीं हो सकता। जनतामें उसके विरुद्ध सदा अन्तरंग मन्त्रणायें होती रहती हैं और समय पाकर जनताके द्वारा बलवद्-विरोधी प्रदर्शन भी उपस्थित किया जाता है। मैं इस असदाचार के मौलिक रूप को अच्छी तरह जानता हूँ। वह समय आने पर ही ठीक होगा। इस तरह कहकर वे मित्रों को टाल देते। मित्र इस तत्त्व तक नहीं पहुँच पाते कि महावीर जब तक अपना पूर्ण विकास न कर लेंगे तब तक धार्मिक क्षेत्रमें वे जनता का नेतृत्व हरगिज नहीं करेंगे। उनके अभी प्रव्रज्या लेनेका समय दूर है।

बालक महावीरके कुछ और बड़े हाने पर भी उनकी गम्भीर मुद्राको देखकर लोगोंको आश्चर्य होता था। उन्हें एकान्तवास बड़ा प्रिय था। उनकी आवश्यकतायें बहुत ही सीमित थीं। उनके माता-पिता उनकी यह स्थिति देखकर बड़े विचारमें पड़ जाते थे। एक दिन उनके मित्रोंने उन्हें वनक्रीडाको चलनेके लिए विवश कर दिया। मित्रोंके अनुरोध वश वर्द्धमान को वनक्रीड़ाके लिए जाना पड़ा। वहाँ सब मिलकर अंडाडावरी या आमलक्रीड़ा का खेल खेलने लगे। खेल चल ही रहा था कि अचानक एक विषधर सर्प भयङ्कर फण फैलाकर बालकों की ओर झपटा। अन्य सब बालक तो भयसे काँपने लगे पर वर्धमान इस स्थितिमें भी निडर बने रहे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उन्होंने अपने साथियोंको सम्बोधित करके कहा—मित्रो डरते क्यों हो ? जब हम इसका कुछ भी नहीं बिगाड़ना चाहते हैं तो हमें इससे भय ही क्या है ? हमारे अहिंसक परिणाम इसे सुतरां शान्त कर देंगे । अधिकतर बालक भयातुर होकर वृक्षसे जमीन पर कूद गये, पर वर्द्धमान ने उन्हें दिलाशा देते हुए सर्प का फण पकड़ लिया और कहा—देखो, इसका विषाक्त फणाटोप मेरे हाथ में है, अब भय का कोई कारण नहीं है । आप लोग धीरे धीरे दूर हो जाइये । मैं आप लोगोंको निर्भय करके ही यहांसे हटूंगा । बालक महावीर का यह साहस था जो उन्हें अपने साथी मित्रोंका प्रेम भाजन बनाये हुए था । सर्पका उपसर्ग दूर हुआ और वे सब मिलकर घर आये ।

घर आने पर उनके मित्रोंने महारानी त्रिशलाको आजकी वन-क्रीड़ाका समाचार सुनाया । उसे सुनकर वे घबड़ा गईं और वर्द्धमान की कुशलता जाननेके लिए उनके कक्ष की ओर चल पड़ीं । किन्तु कुमारसे उनकी भेंट मार्गमें ही हो गई । माताको देखकर वे बोले—माता ! मेरे लिये आप इतनी चिन्तित क्यों होती हैं ? यह तो तुम जानती ही हो कि मैं जब कभी भी किसी प्राणीको नहीं सताना चाहता तो मुझे कौन कष्ट पहुँचावेगा । कष्टके भागी वे होते हैं जो दूसरोंको कष्ट देना चाहते हैं । आप मेरे लिए कभी कोई चिन्ता न करें ।

महावीरके इस कथनमें तत्त्वनिष्ठाके प्रति जो प्रगाढ़ श्रद्धा थी उसे देखकर माताने हँसते हुए कहा—प्रियदर्शन ! तुम्हारी मनोहर मुखाकृति में ही यह प्रभाव है कि जो उसे देखता है वही मुग्ध हो जाता है । यदि विषधर नाग तुम्हें देखते ही शान्त हो गया तो इसमें क्या आश्चर्य है । पर माताकी ममता जो ठहरी । चिन्ताका प्रसंग उपस्थित होने पर उसका फूट पड़ना स्वाभाविक है ।

अभी बातचीतका सिलसिला नहीं टूटा था कि इतनेमें महा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजा सिद्धार्थं भी वहां आ गये और बोले—कुमार ! सर्पके साथ इस तरह खेल करना क्या प्राणोंके साथ खिलवाड़ करना नहीं है ?

वर्द्धमान—पिता जी ! क्षत्रीका कर्त्तव्य है कि वह प्राणोंकी बाजी लगाकर भी अपने आत्मीयोंको निर्भय बनावे। यदि इसका अभ्यास बाल्य-जीवनमें अंकुरित न हो सका तो वह क्षत्रीकुमार ही कैसा ?

महाराजा—कुमार ! विषधरसे खेलना साहस नहीं माना जा सकता है। यह खेल आत्मघातका मार्ग प्रशस्त बनाता है।

वर्द्धमान—निःसन्देह ! यदि वह खेल, खेलके लिये किया गया हो, पर उद्देश्य यदि संरक्षणका हो तो वह क्षत्रियकुमारका साहजिक कर्त्तव्य हो जाता है।

महाराजा—नीति कहती है कि 'आत्मानं सततं रक्षेत्' ।

वर्द्धमान——इस नीतिवाक्यका लक्ष्य सामान्य कृत्य है। विशेष अवस्थामें क्षत्रियोंने इस नीतिका सदा उल्लंघन किया है। यदि क्षत्रिय प्रजापालन, प्रजासंरक्षण, और अन्यायदमन आदि वीरोचित कर्त्तव्योंके समय इस नीतिका आश्रय लेकर अपना बचाव करता है तो वह उसकी कायरता है, राजनीति नहीं।

महाराजा—कुमार ! यद्यपि तुम्हारे इस कथनके विरुद्ध जानेका किसी वीरमें साहस नहीं है पर मेरा अभिप्राय—

वर्द्धमान—पिता जी ! पुत्रस्नेह वश आपका अभिप्राय जो भी हो पर आपकी अन्तरात्मा इसके विरुद्ध नहीं, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वस्तुतः आप राजनीतिके मर्मज्ञ हैं। यह आपका गणतन्त्र शासन ही बतला रहा है।

महाराजा—कुमार ! धन्य हो। वास्तवमें तुम्हारा यह साहस वीरोचित था। इस कार्यसे तुम्हारा नाम 'महावीर' के रूपमें दुनिया के परिचयमें आवेगा ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। सामान्य बालकमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न तो इतना विवेक ही हो सकता है और न इतना साहस ही। तुम्हारे हस्तस्पर्शसे उसकी दशा बदल गई यह अलग बात है किन्तु इसके पहले वह विषधर इतना जहरीला था कि उसके फूत्कारसे हरे वृक्ष भी सूख गये थे। जिस वनमेंसे होकर वह आया था वह वन बनजर भूमि बन गया है। वह हतप्रभ होकर चला गया, इसे तुम्हारा प्रभाव ही समझना चाहिए। मेरा दृढ़ विश्वास है कि तुम्हारे स्पर्श ने उसकी आत्माको ही बदल दिया होगा, अन्यथा वह क्या नहीं कर डालता।

वर्द्धमान—पिता जी! आज मानव ही नहीं देवगण भी आत्मज्ञान में असावधान हैं। परको पददलित करना ही बलपौरुष माना जाता है। पारस्परिक प्रेम और अहिंसाका वातावरण तिरोहित हो गया है। इसीसे सारी विषमताएँ भारतमें आ गई हैं। किन्तु मैंने उसे अपना-सा संसारी प्राणी समझा; अतः मेरी आत्मामें उस समय न तो उससे घृणा थी और न घातक मनोवृत्ति। इस कारण उसे अपना स्वरूप समझनेमें अधिक देर नहीं लगी। उसने अपनी देव माया संवरण कर अपने समाधान का मार्ग पा लिया। अब तो उसका मानस ही बदल गया है। महावीरके जीवनमें यह एक ऐसी साहसिक घटना थी जिसके महत्त्वको आम जनताने हृदयंगम किया था और इसके फलस्वरूप उन्हें वर्धमान महावीर इस नामसे पुकारने लगी थी।

इस तरह बालक महावीर की अद्भुत प्रतिभा और साहस देखकर प्रातःकालसे सायंकाल तक जनताका संचार बढ़ गया। महावीर विना किसी संकोचके प्रजाके दुःखोंको सुनते और उन्हें अहिंसात्मक पद्धतिसे दूर करनेके सदुपाय बताते रहते। परिणामस्वरूप महावीरके बाल्यकाल में ही जनता के आचार-व्यवहारमें मौलिक सुधार होने लगा। हिंसा, झूठ, चोरी और कुशीलसे लोगों को घृणा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होने लगी। जनताने नागरिक कर्त्तव्योंको समझा। आम जनताको गणतंत्रीय प्रजाके अधिकार और कर्त्तव्यों का ज्ञान तो हुआ ही, उसे यह भी भान होने लगा कि जैसे हमको दूसरोंके असदाचरण और दुर्व्यवहारसे कष्ट होता है इसी तरह प्रत्येक प्राणी को होता है। फलस्वरूप धीरे धीरे पशुओं की बलि का तातां भी विरल होने लगा। केवल हठग्राही और अयथार्थ विचारधारावाले जन इस महापुरुषके संसर्गसे किनारा करते रहे और अपने हवन-कुण्डके प्राणसंहारी हुताशनमें आहुति देते रहे। फिर भी इस अल्प कालमें जो भी परिवर्तन हुए उनसे गणनायक सिद्धार्थ और महारानी त्रिशला को बड़ा प्रमोद हुआ।

महाराजा अक्सर कहा करते—देवि त्रिशले! हम लोगों की अहिंसात्मक तपस्या सफल हो गई। वह दिन अब दूर नहीं जब महावीर गणतन्त्रकी बागडोर अपने हाथमें लेकर जनता का सच्चा हित साधन करेंगे। महारानी त्रिशला अपने पुत्रके विरद सुनकर अतीव प्रमाद पातीं और बालक महावीरकी निरन्तर शुभ कामनायें किया करतीं।

श्री महावीरका यौवनकाल

परिवर्तनशील संसारमें कोई भी पदार्थ अपना अस्तित्व एक रूपमें अधिक समय तक स्थिर नहीं रख सकता, चाहे वह चेतन हो या अचेतन।

वैशाली गणतंत्रका यद्यपि प्रादुर्भाव हो चुका था किन्तु राज-तंत्रात्मक परम्पराको आमूल बदल देना साधारण काम नहीं था। आज हम भारतवासियों को यह तत्त्व प्रत्यक्ष अनुभवमें आ रहा है। निःसन्देह महात्मा गांधी युग की धारा को समयानुकूल मोड़ने की अद्भुत क्षमता रखते थे। गाँधीजी को वह क्षमता अहिंसा एवं सत्यके आलोकमें प्राप्त हुई थी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वृटिश पार्लिमेन्टके कूटनीतिज्ञोंसे सफलता पूर्वक लोहा लेना आसान काम नहीं था। हजार वर्षसे गुलाम देशको खूनी पंजोंसे निकालकर उपयुक्त वातावरणमें ला देना गाँधी जी जैसे महान् नेताका ही काम था। उनके बाद उनकी नीति यदि पूर्णतया जीवित रही होती तो भारत अपनी स्वतंत्रताके ८-९ वर्षोंमें ही कहींका कहीं पहुँचा होता। मुझे इस प्रकरणमें आपको यह बतलाना है कि कुमार वर्द्धमान महावीरने तत्कालीन परिस्थिति का अपने यौवन कालमें कैसे सम्हाला और अलिप्त रहकर उसका सफल नेतृत्व किस प्रकार किया।

गणाधिनायक चेटकके वैशाली गणतन्त्रमें १२ गणनायक थे। वैशालीके आस पास जितना तीरभुक्त प्रदेश है, जिसे आज तिरहुत कहते हैं, उसका सम्बन्ध वैशाली गणतंत्रसे था। गणसत्ताक राज्य की नीव विहार प्रान्तमें वैशालीसे प्रारम्भ होती है। राज्यशासनके अत्याचारोंसे उत्पीड़ित होकर विदेहके क्षत्रियोंने अपना एक स्वतंत्र संघटन बनाया था। उन्होंने जनताकी सुविधा और संरक्षणकी व्यवस्थाके लिये अनेक सन्निवेश स्थापित किये थे। कोल्लागसन्निवेश, ज्ञातृसन्निवेश और वैशालीसन्निवेश आदि १२ गणराज्य थे। गणनायक सिद्धार्थ ज्ञातृवंशीय सन्निवेशके संचालक थे। सामन्तशाही शासनसे जनताका उद्धार कर उसे गणतंत्रीय विचार धारासे परिचित कराना एवं उसके योग्य शिक्षा दीक्षा देना एक महान् कार्य था।

दासता युगसे उद्धारकर मानवके स्वाभाविक स्तरका सर्वाङ्ग सुन्दर रेखाचित्र बनाना आसान कार्य नहीं है। इसका सम्बन्ध गम्भीर अनुभव, उदारता एवं प्रजावत्सलतासे है। यद्यपि गणाधिनायक राजा चेटक असाधारण प्रतिभाशाली साहसी वीर शिरोमणि थे। उनके गणतंत्र की आधार शिला भ० पार्श्वनाथ की उपदिष्ट

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्ण अहिंसा थी। किन्तु अहिंसाके आलोकमें राज्यशासन को सञ्चालित कर जनताको अनुशासनमें रखना सरल काम नहीं है। महात्मा गाँधीके प्रयाणके बाद आज अहिंसाका क्या स्थान है इसे हम प्रतिक्षण अनुभव करते हैं। गायोंको मातृरूपमें माननेवाले हम हिन्दू लोग आज गोहिंसा बन्द करनेका एक साधारण सा कानून भी नहीं बना सके हैं तब आप खयाल कीजिये कि उस समय राजतंत्रोंके बल पर यजन याजन करनेवाले ब्रह्मर्षियोंके क्रिया काण्डोंसे मूक प्राणियोंको अभय दिलाना कितना गुरुतर कार्य रहा होगा।

युवक महावीरने गणतंत्रकी इस कठिनाईको समझा और इसे हल करनेके लिए अहिंसात्मक उपाय अपनाना प्रारम्भ किया। उन्होंने सर्वप्रथम शिक्षा-दीक्षामें मौलिक परिवर्तन कर प्रारम्भिक शिक्षाकेन्द्रोंमें छात्रधर्मकी प्रतिष्ठा कराने की व्यवस्था की।

इसके लिये जगह जगह बाल्य गुरुकुल, कन्या गुरुकुल एवं क्षात्रविद्या शिक्षणशिविर स्थापित करवाए। उनके आचार्यों की गतिविधि पर अपने दिव्य ज्ञानका प्रकाश डाला। तथा यथावकाश उनमें स्वयं उपस्थित होकर दिव्य ओज भरना प्रारम्भ किया। फलतः थोड़े ही समयमें कुमार महावीरका कार्यक्रम इतना व्यस्त हो गया। जिसके फलस्वरूप वैशालीके लिच्छवि और वज्जीभूमिके राजन्य महावीरके प्रभावमें आकर जनता की भलाई और बालकोंके नैतिक स्तरको उच्च बनानेमें जुट गये। गणतंत्रकी जनतामें नया बल आने लगा। प्रत्येक बालक और बालिका अपने औदार्य एवं कलादिका उन्मुक्त प्रदर्शन करनेके लिए लालायित हो उठे।

युवक महावीरने अपने सहयोगियों एवं सहकर्मियोंके मानसका गंभीरतासे प्रत्यालोचन कर बालकों और युवकोंमें उत्साह भरनेके लिए प्रदर्शनपर्वों की व्यवस्था करवाई। गणतंत्रीय संथागारने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उनके अनुरोधको सन्मानकी दृष्टिसे देखा एवं हर तरहके प्रदर्शनोंकी व्यवस्था की। इस प्रदर्शनपरम्पराने वैशाली गणतन्त्रके अनुशासन में चार चांद लगा दिये।

जिस देशमें जनता अनुशासनका आदर करती है वही देश समृद्ध और उन्नत हो सकता है, क्योंकि शासन जनताकी मनोवृत्तिका प्रतीक होता है।

आज भारतीय गणतंत्रकी जनतामें भारी कमी है। इसका एक कारण यह भी है कि जो शिक्षाका स्तर हमको गुलाम बनाने के लिये निर्माण किया गया था आज वह ज्योंका त्यों बना हुआ है। आज हमारे बालक परीक्षा पास करनेकी मशीन बने हुए हैं। न तो उन्हें गृहोद्योग आता है और न वे नौकरीके अतिरिक्त किसी घरेलू या सामाजिक कामके योग्य बन पाते हैं।

युवक महावीर मानवोंके मानसका गंभीर अध्ययन करनेकी क्षमता रखते थे। तत्कालीन परिस्थितिका उन्हें भी पूर्ण ज्ञान था। जनताके मानसमें उठनेवाले उथल पुथलको वे खूब समझते थे। अतः उन्होंने युवक और युवतियोंको इस ढंगसे रचनात्मक कार्यों में लगाया जिससे उस प्रदेशके निवासी राज्यतंत्रोंके मुंहताज न रहें। वे अपनी आवश्यक सामग्री स्वयं उत्पन्न करने लगे। गणतंत्रकी सम्पत्तिका सदुपयोग होने लगा। बाग बगीचा लगाना, खेतीकी पैदावार बढ़ाना, ढँगसे पशुओंका पालन पोषण करना, वस्त्रोंका निर्माण, मन पसंद सुन्दर रँगोंका उत्पादन, चित्रकला, संगीत, वाद-विवाद प्रतियोगिता, प्राचीन साहित्यका गंभीर अध्ययन, युगके अनुकूल नव्य साहित्यका निर्माण, वाक्पटुता, सैन्यशिक्षा, शिष्टाचार, स्वच्छता, वापी कूप तड़ागादि का निर्माण, नाट्यशाला, कीर्तनकला, और धर्मकथा आदिके लिए भव्यभवनका निर्माण और अस्त्र-शस्त्र संचालनके प्रशिक्षणके लिए विशाल समतल मैदान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदि विविध ज्ञानवर्द्धक आयोजनोंसे वैशाली गणतंत्र उद्दीप्त हो उठा।

युवक महावीरने अपनी अहिंसाका सुन्दर प्रदर्शन गणतंत्रकी प्राण-प्रतिष्ठामें किया था। यही कारण है कि महात्मा बुद्धसे जब जब वज्जीभूमिवालोंने प्रश्न किया कि:—

भन्ते !

वैशाली गणतंत्र पर चारों ओरसे प्रहार होना चाहता है, हम क्या करें? तब तब उन्होंने एक ही उत्तर दिया कि जब तक संथागार के सभी नियमोंका यथावत पालन होता है, एक दूसरेका विश्वास करता है, जनता संथागारके नियम उपनियमों पर अन्तःकरणसे आरूढ़ है तब तक जाओ निःशंक रहो। तुम्हें कोई आँख नहीं दिखा सकता, क्योंकि वे जानते थे कि मुझसे ३४ वर्ष पूर्व निगंठ महावीर का प्रादुर्भाव हुआ था। करीब ३० वर्ष महावीरने वज्जी-भूमिमें बिताये। वैशाली गणतंत्रके नियम उपनियम उनकी अन्तर्दृष्टिके आलोकमें निर्मित हुए। इन नियमोंके पालन करने-वालोंकी संघ शक्ति अजेय है।

यही क्यों म० बुद्ध यह भी जानते थे कि जब मैं आठ वर्षका था तब निर्ग्रन्थ ज्ञातृपुत्र सर्वज्ञ सर्वदर्शी बन चुके थे। उनके जीवनमें जो दो वर्ष तपस्याकालमें गुप्त रहना बताया गया हैवह क्या है? बुद्धने प्रथम जैन साधु की ही दीक्षा ली थी। किन्तु जब उन्होंने दिगम्बरत्व की कठिन चर्य्याका भार वहन करनेमें अपनेको अक्षम पाया तब मध्यम मार्ग अपनाया। इसीलिये उनके शासनमें जैन शासनकी अर्हन्त आदि वे ही महत्त्व पूर्ण संज्ञायें और संकेत देखने को मिलते हैं जिनका आज इतिहास साक्षी है। सभी ऐतिहासिक एक स्वरसे यह मानते हैं कि बुद्धके जन्मसे महावीरका जन्म कई

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दशक पूर्व हुआ था और बुद्धके जीवनकालमें ही महावीर निर्माणको प्राप्त हो गये थे। दोनों सन्तोंने केवल दो वर्ष साथ साथ अलग अलग क्षेत्रोंमें अपना धर्म प्रचार किया। महावीरके निर्वाणके बाद म० बुद्धने बहुत दिन तक बौद्ध धर्मका प्रचार किया यह बात बौद्ध ग्रन्थों और इतिहाससे प्रमाणित है।

युवक महावीर इस तरह जनताका नेतृत्व करते हुए उसे अहिंसक पथ की ओर ले जारहे थे। तथा अपने संयत आचरण द्वारा नवयुवकों और युवतियोंमें मानसिक संतुलन को गृहस्थोचित रखने की मूक शिक्षा भी दे रहे थे।

जब उन्हें यह विश्वास हो गया कि अब वज्जीभूमिका वातावरण अहिंसा की दिव्य सौरभसे सुवासित हो गया है और जनता सत्य, अहिंसा, अचार्य और स्वदारसन्तोष को अपना चुकी है। अब प्रत्येक राजन्य वज्जीभूमिका नेतृत्व करनेमें अपना गौरव अनुभव कर आगे आने लगा है तब उन्हें अपना कर्तव्य पथ आगे बढ़ानेके लिए अनुप्राणित करने लगा। वे सोचने लगे कि मेरी अवस्था अब २८ वर्ष की हो चुकी है मुझे अब मोक्षमार्गके पुनरुद्धारके लिए अपना पथ अपनाना चाहिये। और धर्मतीर्थके संचालनकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए साधनाके क्षेत्रमें बढ़ना चाहिये, अन्यथा मेरा मुख्य कार्य अधूरा रह जावेगा। संसारके मूक प्राणियों को अभय प्रदान करनेके लिए सदाचार की प्रवृत्तिका दिग्दर्शन कराना प्रत्येक तीर्थङ्करका लक्ष्य है। श्रीऋषभदेवसे श्रीपार्श्वनाथ तक जिस दर्शन और विचार की प्रतिष्ठा होती आई है उसका मार्ग प्रशस्त करना मेरा प्रधान कार्य है, क्योंकि उसके बिना सांसारिक विषमताएँ दूर नहीं हो सकतीं। मुझे अब पूर्ण जागरूक रहना है, क्योंकि प्रकृति अब अपना कीचड़ मुझपर उछालनेके लिए प्रयत्नशील है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस विचारधाराके कारण युवक महावीर राज्य और समाजके कार्योंसे सदा अलिप्त रहते थे। वे केवल मार्गप्रदर्शन करते थे। संचालनकी जिम्मेदारी संथागारके नायकों या उसके समर्थ सदस्यों पर रहती थी। ऐसा कोई प्रदर्शन नहीं होता था जिसमें उनके अनुभव की पुट न हो। सारे कार्यक्रम संक्षिप्त, ससीम और यथासमय होते थे। कहीं कोई व्यतिक्रम या अतिक्रम न होता था। वैशाली गणतंत्रोंकी जनता इसतरह अनुशासन सम्बद्ध है यह देखकर राजतंत्रोंको आश्चर्य होता था।

एक ओर तो यह क्रम चालू था और दूसरी ओर युवावस्थाने उनपर ज्यों ज्यों रंग जमाना चाहा त्यों त्यों उनकी गंभीरता बढ़ती गई। उनको लोग प्रायः एकान्तमें विचारनिमग्न पाते थे। जब कभी उनके मित्र आकर उन्हें घेर लेते तो वे कहते— बन्धुओ ! यह समय बड़ा मूल्यवान् है। इसे इधर उधर घूम फिर कर बितानेकी अपेक्षा किसी काममें लगे रहना या तत्त्व विचार करना अधिक हितकर है। संसारमें विचारणीय विषयोंकी कमी नहीं है।

हमारी प्रत्येक चेष्टा और कार्योंमें अपने स्वरूपका चित्र अंकित रहना चाहिये। संसारके प्राणी हमारे व्यवहारसे कष्ट न पावें तथा हमारा लक्ष्य सदा सत्यकी खोज करता रहे यही मानव जीवनकी अनुपम सफलता है। हमारा ध्यान सदा लक्ष्यकी ओर रहना चाहिये।

एकदिन महाराजा सिद्धार्थके बहनोई कलिंगाधिपति राजा जितशत्रु अपने परिवारके साथ कुण्डलपुर आये। महाराजा सिद्धार्थ ने उनका बड़ा स्वागत किया और श्रीयुवा महावीरके आवासके पासवाले राजप्रासादमें उन्हें सम्मान पूर्वक ठहराया। महाराजा जितशत्रु महावीरकी कमनीय रूपराशि और सात्त्विक प्रवृत्तिको देख-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर अत्यन्त मुग्ध हुए। उन्होंने एकान्तमें अपनी महारानी यशोदयासे महावीरके दिव्य रूप और आचरणकी बड़ी प्रशंसा की। महारानी यशोदयाके हृदयमें जन्मकालसे ही बालक महावीर की सुधा-माधुरी दिव्य छटा अंकित थी। अपने पतिको यहाँ लानेका उद्देश्य ही उनका यह था कि वे कुमार महावीरकी रूप-राशि और गुणोंपर मुग्ध हो जावें। अपना अभीष्ट सिद्ध होता देख वे बोलीं—देव! हमारे महावीरमें वे सब गुण हैं जो एक क्षत्रिय कुमारमें होने चाहिये। वे स्वभावसे गंभीर, दयालु तथा न्यायप्रिय हैं। साहस और धीरताके वे मनोहर पुंज हैं। उनकी समीचीन व्यावहारिक कुशलता पर सारी जनता मुग्ध है। इन सब गुणोंके अतिरिक्त उनमें सबसे बड़ा गुण है अभिमानका अभाव जो प्रत्येक राजकुमारमें स्वभावसे ही हुआ करता है। उनके अलौकिक आचरण और प्रभावशाली नेतृत्वने तो वज्जीभूमिके विशाल गण-तंत्रमें चार चाँद लगा दिये हैं। देखते नही हैं कि यहांके नवयुवक कितने ओजस्वी एवं अनुशासनप्रिय हैं, यह सब कुमार महा-वीर की ही देन है।

महाराजा जितशत्रु—हाँ! यह सब तो मैं देख ही रहा हूँ। जिस समय प्रातःकाल अनेक प्रजाजन उनसे भेंट करने आये थे उस समय वे स्नान कर रहे थे। फिर भी तत्काल वस्त्र पहन कर वे उनसे भेंट करनेके लिए बाहर चले गये तथा उचित सान्त्वना देकर वहांसे वे बड़ी देर बाद लौटे और सीधे अपने कक्षमें जाकर दूसरे कार्योंमें लग गये।

उनकी माताका संदेशवाहक उनके पास भी न पहुँच पाया कि उठकर वे उनके कक्षमें जा पहुँचे। उनकी वाणीमें जो मिठास है उसका तो कहना ही क्या है। बोलते समय अमृतका प्रवाह बहने लगता है। अपनी यशोदाके लिये हमने आज तक जितने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजकुमार देखे, हमें तो ऐसा सर्वगुणसम्पन्न एक भी राजकुमार नजर नहीं आया। यदि तुम इस रिस्तेको पसन्द करो तो महाराजा सिद्धार्थसे चर्चा की जाय।

महारानी यशोदयाको मनमानी मुराद मिली। वे तो संकल्प ही किये वैठी थीं कि यशोदाका विवाह महावीरके साथ ही हो। अपना मनोरथ पूर्ण होता देख वे बोलीं—नाथ! सम्वन्ध तो कुछ बुरा नहीं है और हमारे भाई भी इस सम्वन्ध को पसन्द कर लेंगे। आप आज्ञा दें तो मैं भावजसे भी इस सम्बन्धकी चर्चा कर देखूँ।

महाराजा जितशत्रु—अच्छा तो यही है कि पहले तुम उनका अन्तरंग जान लो, फिर हम महाराजासे इस प्रसंगको छेड़ें तो सम्भव है इसमें कुछ आसानी होगी।

इस तरह परामर्श कर महारानी यशोदयाने एक दिन प्रसंग पाकर महारानी त्रिशलासे इस सम्बन्धकी चर्चा की। महारानी तो यशोदाके रूपगुण पर पहलेसे ही मुग्ध थीं पर वे स्वयं अपनी ननँदसे कैसे कहतीं। उन्होंने हँसते हुए कहा—प्रिय-दर्शने! आपके लिये महावीर अपने ही है। जितना मुझे उनपर स्नेह है उतना ही आपको भी है। योग्य बेलामें मैं महाराजासे चर्चा कर इस सम्बन्ध को सफल बनाने की चेष्टा करूँगी।

महारानी यशोदया—मेरा विश्वास है कि आपकी स्वीकृति मिलने पर भाई साहब मना नहीं करेंगे। कुमार महावीर काफी बड़े हो गये हैं। यही अवस्था ब्याह शादी की होती है।

महारानी त्रिशला—हाँ सो तो ठीक है। महाराज भी सम्बन्ध की बात सोच रहे हैं। पर अभी तक उन्होंने इस विषयमें कुमार महावीरकी सम्मति नहीं ली है। वे साधारण व्यक्ति तो हैं नहीं। उनका ज्ञान, विचार और कार्य्य सब ही विवेकपूर्ण होते हैं। आप भी उनकी चेष्टाओंसे यह अनुभव कर चुकी हैं कि वे महासत्त्व

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं। ससारके जीवोंको सुखी बनाना यही एकमात्र उनका उद्देश्य है। कई वर्ष पूर्व इस प्रदेशमें धर्मके नाम पर जो हजारों प्राणियों की वलि होती थी, भ्रष्टाचार फैला हुआ था और प्रजा पुरोहितोंके हाथकी कठपुतली बन गई थी वह सब वातावरण उनके जन्मके बाद ही शान्त हुआ है और आज तो प्रदेश भरमें एक भी ऐसी यज्ञशाला नहीं दिखाई देती जहाँ धर्मके नाम पर जीवित पशुओंका हवन होता हो। इस अवस्थाके बदलनेमें कुमारकी अहिंसक मनोवृत्ति और उनका जनतासे घनिष्ठ सम्पर्क ही कारण है। आप देखती ही हैं कि प्रातःकालसे सायंकाल तकका उनका सारा समय केवल इसी चर्चामें जाता है और सबसे बड़ी बात तो यह है कि इससे उनकी दिनचर्यामें जरा भी अन्तर नहीं आता। देवि! मैं क्या कहूँ, कुमारको प्रतीहारी भेजकर बुलाने की लालसा मेरी आज तक पूरी नहीं हुई। रूठना और मचलना तो वे जानते ही नहीं। मेरे मनमें कुमारका स्मरण होते ही उन्हें सामने मुस्कराते हुए खड़ा पाती हूँ। वे हम लोगोंके हृदयोंकी एक एक बात जानते हैं। इतना प्रतिभावान् बालक पाकर मैं तो धन्य हो गई। इसीलिए आज तक हम लोगोंने इस बात का प्रसंग इनसे नहीं छेड़ा। यदि इनकी मरजी न हुई तो—

महारानी त्रिशला वाक्य पूरा करना ही चाहती थीं कि इतनेमें महाराजा सिद्धार्थ भी अन्तःपुरमें आ गये और ननंद भौजाई को एक जगह बैठकर बात करते देख अपने कक्षकी ओर जाने लगे। किन्तु यशोदयाने इस प्रसंगसे लाभ उठाना ही ठीक समझा। वे उठकर उनके पास गईं और बोलीं—भाई साहब! मैं आपसे एक अनुरोध करना चाहती हूँ। आज्ञा हो तो करूँ।

सिद्धार्थ—कहो बहिन यशोदये! तुम्हारे हर अनुरोध मेरे लिये सुखकर होते हैं। तुम जैसी स्नेहशीला एवं स्वच्छहृदया

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहिन पाकर मैं अत्यन्त भाग्यशाली हूँ। तुम्हारी हर कामनाकी पूर्ति करना मैंने अपना कर्तव्य समझा है। बोलो क्या कहना चाहती हो ?

यशोदया—भइया! तुम सदा मुझसे ऐसी बात कहते हो जिससे मैं पानी पानी हो जाती हूँ। छोटी होने पर भी पता नहीं मुझे इतना क्यों बढ़ाते हो!

सिद्धार्थ—बात तो ऐसी ही है। पर बहिन यशोदये! मैं जब तुम्हें देखता हूँ तब मातृज रक्त मेरी धमनियोंमें दौड़ने लगता है। आज भी वही स्नेह है जो बाल्यकालमें था। हम तुम बाल्यावस्थामें इसी आंगनमें खेलते थे, इसी मंच पर सोते थे और माता दोनोंका समान भावसे लालन-पालन करती थीं। कहो बहिन, है न ऐसी बात।

यशोदया—सच कहते हो भइया! बात तो ऐसी ही है। मुझे आज भी जब आपका स्मरण हो आता है तो आपको देखनेके लिए विकल हो जाती हूँ। अभी जो मैं अचानक आई इसका यह भी एक कारण है।

सिद्धार्थ—बहिन यशोदया यह घर तुम्हारा है; तुम और हम माताके उदरसे लेकर बाल्यकाल तक यहीं खेले हैं। इसे कैसे भुलाया जा सकता है? आखिर हमारा तुम्हारा एक ही तो रक्त है।

यशोदया—भइया! मैं चाहती हूँ कि हमारा तुम्हारा यह सम्बन्ध हमारी सन्तानोंको भी एक सूत्रमें बाँधे रहे, इसलिए यशोदाका सम्बन्ध महावीरसे कर दिया जाय तो कैसा रहे? यह बात सुनते ही सिद्धार्थके हृदयमें भारी बोझ हो गया। वे भावी आशंकासे मन ही मन कराह उठे। पर प्यारी बहिनके अनुरोधको टालनेकी उनमें क्षमता न थी; अतः क्षण भरके लिये मौन हो विचारमें पड़ गये।

यशोदया—क्यों भइया! क्या यशोदा महावीरके योग्य नहीं है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सिद्धार्थ—प्रिय बहिन ! इसे कौन नहीं मानता कि यह संयोग मणि-कांचन संयोग है। पर क्या उत्तर दूं सो समझमें नहीं आता।

यशोदया—भाईसाहब ! इसमें समझने की बात ही क्या है ?

सिद्धार्थ—बहिन ! तुम्हें आये आज आठ दिन हो गये। तुमने यदि ध्यानसे महावीर की दिनचर्य्या को देखा हो तो तुम अनुभव कर सकती हो कि कुमारकी मनोवृत्ति क्या है ? ऐसा प्रतिभासम्पन्न बालक मैंने आजतक नहीं देखा। सारा वैशाली गणतंत्र उनके गुणों पर मुग्ध, कार्यों पर अनुरुक्त और उनके व्यवहारसे पूर्ण सन्तुष्ट है। मैं तो नाममात्रका गणनायक हूँ। मुझ तक एक भी न्याय नहीं पहुँच पाता। राज्यमें कोई उपद्रव ही नहीं होता। हमारे गुप्तचर हैरान हैं। हर जगह उन्हें कुमारके प्रभावकी चर्चा ही सुनने को मिलती है। सारी जनता अपने कर्तव्यों और अधिकारोंसे पूर्ण परिचित हो गई है। यहाँके नवयुवक एक क्षण भी फालतू नहीं गमाते। निरन्तर उद्योग-धन्धेमें लगे रहते हैं। प्रजामें वेकारी ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगी। खेती का तो अजब हाल है। जबसे कुमारने इस धराको अपने जन्मसे पवित्र किया है उस दिनसे यहाँ कभी अकाल नहीं पड़ा। सारी ऋतुएँ अपने अपने समय पर दास-दासियोंकी तरह अपना कार्य पूर्ण कर रही हैं। प्रान्त भरसे चोरी, डाका और अनाचारका नाम उठ गया है। न मालूम कुमारने जनताके हृदयोंमें कौन-सा मंत्र फूँका है जिससे सब लोग व्यवस्थित ढंगसे अपने अपने कार्य्योंमें दिन-रात मस्त रहते हैं। शिक्षाका प्रबन्ध देखकर मुझे भी आश्चर्य होता है। हमारी प्रजाके बालकोंमें नई ज्योति और नया उत्साह दिखाई देता है। नये नये कार्य्योंका अयोजन आये दिन होता रहता है। तारीफ यह है कि कुमार कभी घरसे बाहर नहीं जाते। अपने कक्षमें बैठकर सारे सूत्रोंका बड़ी सुन्दरतासे संचालन करते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुझे डर लगता है कि यह सब खेल कुमारके इधरसे चित्त हटाते ही समाप्त न हो जाय। आज तक कुमारकी दृष्टिमें नर और नारीका भेद ही नहीं आया। वे हरएक से मिलते हैं और हर बालक बालिकाका पथप्रदर्शन करते हैं। इसे देखकर मुझे यह आशंका होती है कि कहीं विवाहका प्रस्ताव उनके सामने आते ही वे विरक्त न हो जाँय। उनके हाथमें विवाहकी रेखा ही नहीं है। ज्योतिषियोंका कहना है कि ऐसा कोई प्रसंग उनके सामने नहीं आना चाहिए।

यशोदया—भैय्या! यहाँ आप कुछ भूल कर रहे हैं। प्रकृति मानव-तनमें अनुरागके बीज समयानुसार स्वयं बोती रहती है। कुमार भी मानव हैं। प्रकृति उन्हें अछूता रहने दे यह हमारी समझमें नहीं आता।

सिद्धार्थ—यशोदये! क्या तुमने कभी ऐसा अद्भुत कुमार देखा है जिसने अपने जीवनमें किसी प्रकारकी भी शिक्षा न पाकर हर विषयमें अपनी दक्षताका इस तरह परिचय दिया हो।

यशोदया—नहीं! आप और हम यह तो जानते ही हैं, कि वे चौबीसवें तीर्थंकर हैं। उनकी पूर्व तपस्यासे उन्हें सारी विद्यायें स्वयंसिद्ध हैं। वे उन्हीं सिद्धियोंके बलसे त्रैलोक्यको मार्ग दिखानेकी क्षमता रखते हैं। परन्तु युगकी आदिमें आदि ब्रह्मा ऋषभदेवने, जो कि प्रथम तीर्थंकर थे, क्या विवाह नहीं किया था? तथा उनके बाद होनेवाले १८ तीर्थंकरोंने विवाह और राज्य शासनका भार सम्हाल कर बहुत काल क्या गार्हस्थ्य जीवनमें नहीं बिताया था? इसका प्रमाण आज तकके तीर्थंकरोंकी जीवनियोंमें मिलता है। ऐसी अवस्थामें कुमार विवाह न करेंगे यह आशंका मनमें उठाना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होती?

सिद्धार्थ—बहिन! पहले मनुष्योंकी आयु बहुत होती थी और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुलतासे अनेक मत-मतान्तरोंका प्रचार भी नहीं था, अतः प्रजाके उत्थानमें समयका सदुपयोग करना प्रत्येक तीर्थङ्करको हितकर प्रतीत होता था। परन्तु अब तो चतुर्थ कालके दिन गिनतीके रह गये हैं। कुमारको स्पष्ट दीख रहा है कि मैं जनताके हृदयमें वह बात जमा जाऊँ जिसका प्रवाह कुछ दिन तक स्थायी रहे। अन्यथा पंचम दुखमा कालमें धार्मिक प्रवृत्ति तो कम हो ही जायगी। सदाचार, सत्य और अहिंसाका आधार ही मानव हृदयसे उठ जावेगा। यह कार्य अत्यावश्यक है। तुम देखती नहीं हो कि कुमारका सारा समय केवल सदाचारके शिक्षण, नागरिकताकी मौलिक रूपरेखाके प्रस्तुत करने और उसके प्रचारमें जाता है। धार्मिक तत्त्वोंका निरूपण तो अभी उन्होंने आज तक किया ही नहीं है। सम्भव है, अब वे यह कह सकते हैं कि अब मुझे धार्मिक क्षेत्रमें क्रान्ति करनेके लिए आगे बढ़ना है। बहिन! तुम्हीं बतलाओ उनकी इस भावनासे उन्हें कैसे विरत किया जा सकेगा।

यशोदया—भाई साहब! मालूम पड़ता है कि आप जानकर ही यह प्रसंग नहीं छेड़ना चाहते। मेरा हृदय यह माननेके लिए तैयार नहीं है कि समयानुसार कुमार पर प्रकृतिका कोई प्रभाव न पड़ा होगा। वे आपके द्वारा प्रस्तुत विवाह प्रस्तावको ठुकराकर विरक्त हो जावेंगे यह कम सम्भव दिखाई देता है।

सिद्धार्थ—(मन मसोसकर) अच्छी बात है, जो भवितव्य होगा वह होकर ही रहेगा। कुमारको आने दो। मैं यह प्रस्ताव तुम्हारे सद्भावमें ही उनके सामने रखूँगा।

महारानी त्रिशलाका हृदय इस बार्तासे आन्दोलित हो उठा। वे नहीं चाहती थीं कि कुमारको किसी तरह विरक्त किया जाय। पर वे उसका विरोध न कर सकीं; क्योंकि उन्हें भी प्रथम पक्ष अभीष्ट था। वे यशोदयादेवीकी इस बातसे सहमत थीं कि कुमार पर यौवन की छाया दृष्टिगोचर होने लगी है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमारी यशोदा

कुमारी यशोदाने जबसे महावीरको देखा तभीसे उसका हृदय उथल-पुथल करने लगा था। वह महावीरकी कर्तव्यनिष्ठा एवं अलौकिक गुणोंका प्रकाश चाहने लगी थी। परन्तु आज अपनी माताका प्रस्ताव सुनकर वह सन्न सी रह गई। वह अपनी योग्यता और कुमार महावीरके मानसिक संतुलनका अनेक बार अध्ययन कर यह अन्दाज न लगा सकी थी कि उनके अन्तस्तलको छू सकना मेरे लिये कहाँ तक सम्भव है। अनेक युवतियोंको परामर्श देते हुए उसे नवयुवक महावीरकी निर्विकार चर्याका दर्शन कई बार हो चुका था इसलिये माताका प्रस्ताव उसे अप्रासांगिक सा लगा। उसे दृढ़ विश्वास था कि ये देवता उपासनाके ही योग्य हैं। यदि बालिकोचित लज्जा उसका पग न पकड़ती तो वह उन सब के सामने इस प्रस्तावका खुला विरोध करनेके लिए तयार थी! कुमारके नेतृत्वमें जनताका महान उद्देश्य उसे प्रत्यक्ष अनुभूत हो रहा था। कुंडली और ज्योतिषियोंका फलादेश सुनकर तो उसे माताके प्रस्तावके निष्फल होनेमें जरा भी शंका नहीं रही थी। उसका हृदय पंख कटे पक्षीकी तरह फड़फड़ाकर रह गया।

उसके समक्ष एक ही समस्या थी कि अब वह क्या करे? वह जानती थी कि यह प्रस्ताव कुमार महावीरके सामने आते ही वह उन्हें उन्मुक्त वातावरणकी ओर बरबश ढकेल देगा और सब पछताते रह जायेंगे। वह यह भी जानती थी कि इससे सबसे ज्यादा अकाज मेरा होगा। कास! मैं इनके पवित्र सम्पर्कमें रहकर कुछ सुन समझ पाती और इनके अनुसरण योग्य अपनेको बना पाती। पर मेरी माताने मेरे भौतिक सम्बन्धके व्यामोहमें आकर मेरी अन्तर्लालसाको रोंध डाला है। हाय! क्या करूँ। आज तो मुझे इतना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्ञान भी नहीं जो अपने पथका निर्माण स्वयं कर सकूँ। मुझे आज दूसरे रूपमें इनका सानिध्य अभीष्ट था। पर अब क्या हो सकता है। अब तो सिर्फ एक ही उपाय है और वह यह कि मैं इनकी प्रव्रज्याके पूर्व इनसे अपना पथ निर्माण करा लूँ।

श्री महावीर वैराग्यकी ओर

एक दिन कुमार महावीर ज्यों ही भोजनशालासे निकले, महाराजा सिद्धार्थने उन्हें अत्यन्त स्नेहसे अपने कक्षमें बुलाया। कक्षमें महारानी त्रिशला और यशोदया देवीको बैठा देख वे मन्द मन्द मुसकराते हुए माताके पास ही एक आसन पर जा बैठे। माताने उनके सर पर स्नेहसे हाथ फेरते हुए कहा—कुमार! तुम्हारी बुआ कुछ कहना चाहती हैं। इनकी कई दिनसे इच्छा थी कि तुमसे बातें कर अपनी इच्छा पूर्ण करें। पर तुम दिनरात जनताके उत्कर्षमें लगे रहते हो; इसीलिये हम लोगोंने जनताके उत्थानमें प्रत्यूह बनना उचित नहीं समझा।

महाराज सिद्धार्थ—कुमार! अब हमारी अवस्था धीरे धीरे क्षीण होती जा रही है। प्रजा तुमसे सम्पर्क बढ़ाकर अपने कर्तव्योंको समझने लगी है। वह हर तरहसे अनुशासित है। तुमने अपने लोकोत्तर व्यवहारसे जैसे मेरी सारी चिन्ताएँ कम कर दीं हैं उसी तरह मेरी एक अभिलाषा और पूरी कर मुझे शान्ति प्रदान करो।

कुमार—तातपाद! आपके अभिभावकत्वमें जनताके लिए मार्गदर्शन करना मेरा साहजिक कर्तव्य है। आपकी प्रत्येक सम्मति और आदेशका मैंने पूरा विचार किया है तथा उसे पूर्ण करनेमें अपनी शक्तिका उपयोग किया है।

सिद्धार्थ—इसमें तो जरा भी सन्देह नहीं है कि मेरे मनमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जितनी भी इच्छाएँ थीं उन्हें तुमने बिना किसी आदेश या संकेतके पूर्ण कर दिया है। केवल एक इच्छा शेष रहती है। उसके पूर्ण होते ही मैं सब चिन्ताओंसे मुक्त हो जाऊँगा। हमारी बहिन यशोदेवी अपनी कन्या यशोदाका तुम्हारे साथ पाणिग्रहण करनेका संकल्प कर यहाँ आई हैं। वे चाहती हैं कि जनताको आदर्श गार्हस्थ्य जीवनकी शिक्षा देनेके लिए यशोदाका विवाह तुम्हारे साथ हो। अन्य जो हमारे और उनके कुलके मध्य जो सम्बन्ध है वह कुछ समयके लिए और दृढ़ हो जावे। कन्याके पिता महाराज जितशत्रु भी इस सम्बंन्धके लिए लालायित हैं। जिस समय यह चर्चा चल रही थी और यशोदया कुमारके मुखकी ओर इस आशासे वि वे कुछ कहें टकटकी लगाकर देख रही थीं कुमार अत्यन्त शान्त थे। जब वे इतना आग्रह होने पर भी कुछ न बोले तो त्रिशलाने उनके सर पर हाथ फेरते हुए कहा—वत्स! तुम जगद्गुरु हो। तुम्हें समझानेका साहस हम लोगोंको कैसे हो सकता है। पर संसारका नाता एवं माताका मोह मुझसे बुलवा रहा है। महाराजाने जो प्रस्ताव तुम्हारे सामने रखा है वह समयानुसार है। उसे स्वीकृत कर अपने परिवारको सन्तुष्ट करना तुम्हारा स्वाभाविक कर्तव्य है।

माताके अनुरोध पर भी जब कुमार कुछ न बोले तब यशोदयाने बड़ी नम्रता और मधुर वाणीमें कहा—कुमार! भगवान् ऋषभदेव आद्य तीर्थंकर थे। उन्होंने भी कच्छ सुकच्छ राजाओंकी कन्या नन्दादेवी और सुनन्दादेवीसे विवाह किया था। उनके अनेक पुत्र पुत्रियाँ थीं। उन्होंने युगकी आदिमें गार्हस्थ्य जीवनमें रहकर ही संसारके मानवोंको मानवोचित ज्ञान देकर गार्हस्थ्य धर्मकी प्रतिष्ठा की थी। ऐसी अवस्थामें आप क्यों संकोच कर रहे हैं?

अब तो कुमारको मौन भङ्ग करना ही पड़ा। वे बोले—पवित्र-हृदय पिता जी! आप संसारके वास्तविक स्वरूपको भले प्रकार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जानते हैं। अभी आपने स्वयं कहा है कि हमारा शरीर अवस्थानुसार क्षीण होता जा रहा है। यह प्रकृतिका नियम है। इसे कौन रोक सकता है। यह ध्रुवसत्य है कि संसारके सभी पदार्थ समयानुसार निरन्तर परिवर्तित होते रहते हैं। मेरा यह यौवनकाल सदा स्थिर रहेगा यह भला कैसे कहा जा सकता है ? आप ही बतावें कि मैं अपने इस जीवनको कीमती कामोंमें लगाऊँ या कीचड़ उछाल कर व्यर्थ गमाऊँ। मैं माता जी और बुआ जीसे भी अनुरोध करूँगा कि वे मेरे जीवनसे ऐसे कार्यकी ही आशा करें जो सबके लिए उपयोगी हो।

त्रिशला—वत्स ! मैंने अपने जीवनमें आज तक तुमसे किसी प्रकारका अनुरोध या कामना नहीं की। आज ननँदजीके अनुरोध की रक्षार्थ ही तुमसे कह रही हूँ। मेरे तर्क या प्रमाण तुम्हारे सामने नगण्य हैं। मैं तो केवल माताका ममतापूर्ण हृदय ही तुम्हें दिखा सकती हूँ। इतना कहते कहते माताने मोह-विभोर हो कुमारको अपने वक्षःस्थलसे लगा लिया। माताकी ममता और बुआ की मनोकामनाके साथ पिताके अनुरोधका विचार करते हुए भी कुमारको अपने कर्तव्यकी पूर्ति इससे गुरुतर प्रतीत हुई, अतः वे बड़ी नम्र और स्नेहयुक्त गिरासे बोले—माता जी ! आपका मुझपर बहुत ही अधिक स्नेह है। इसका मूल्य नहीं आंका जा सकता। मैं चाहता हूँ कि तुम उसकी माताके नामसे प्रख्यात होओ जो अपने पूर्ण विकाससे अविनाशी पथ पर चलनेके लिए उद्यत है। संसार का भोग कितने क्षणोंका है और उसके द्वारा मैं आपका क्या स्वार्थ साध सकूंगा ? मैंने निश्चय किया है कि मैं वही करूं जिसमें आपका, समाजका तथा संसारका वास्तविक हित है। इसके लिये मैंने अपना मार्ग चुन लिया है। उसे प्राप्त करनेके लिए जिस साधनाकी आवश्यकता है वह यहाँ राजप्रासादमें रहकर पूर्ण नहीं हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सकती। आप लोगोंके समक्ष मेरा एक ही नम्र प्रस्ताव है कि विश्व कल्याण और आत्म-जागरणके लिये आप लोग मुझे अपने निश्चित मार्गसे जाने दें। संसारकी माया-ममता का जाल इतना गँठीला है कि वह आसानीसे नहीं सुलझाया जा सकता। मैंने इस तत्त्व पर कई बार विचार किया है और अपने मनोगत भावोंको व्यक्त करनेके लिए भोजनोपरान्त मैं स्वयं ही यहां आ रहा था। यह प्रसन्नताकी बात है कि उसके पहले ही आप सबने मुझे मेरे भाव-व्यक्त करनेका अवसर दिया है। कुमार महावीरके मुखसे इस बातके सुनते ही महारानी त्रिशला और यशोदया देवी पर मानों वज्र गिर गया। वे चित्रलिखितकी तरह स्तब्ध रह गईं। महाराजा सिद्धार्थ अवश्य सावधान थे। कुछ गम्भीर होकर उन्होंने कुमारसे कहा—प्रियदर्शन! आपको हमारे प्रस्ताव पर विचार नहीं करना है तो मत कीजिये, पर उसके ऊपर अपना प्रस्ताव रखना तो हमलोगों को महान् संकटमें डालना है। यह तो हम लोग जानते ही हैं कि आपका काम बड़ा गुरुतर है। पर अभी वैशाली गणतंत्रका पथ प्रशस्त करनेके लिये आपकी आवश्यकता है। कुछ दिन आपको अभी उसका और साथ देना चाहिये।

कुमार—देव! आप स्थितप्रज्ञ हैं। आपसे संसार की कोई भी बात छिपी नहीं है। यौवनके उद्दाम वेगमें मनुष्य जो काम कर सकता है वह अवस्थान्तर होने पर शक्ति बटोर कर भी उतनी दृढ़तासे नहीं कर सकता। मैं इस समयको एक क्षणके लिए भी प्रमादमें नहीं जाने देना चाहता। जिस तरह संसार की दृष्टिमें यौवनका उपयोग संसारके निःसार भोग हैं उसी तरह मेरी दृष्टिमें आत्मसाधनके लिए इससे सुन्दर दूसरा उपयुक्त अवसर नहीं प्रतीत होता। मैं घरमें ही रहकर सदा आपके कार्योंमें हाथ बढ़ाता रहूँ यह अनुरोध तो जब भी मैं घर छोड़नेका विचार करूँगा तभी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होनेवाला है, क्योंकि मोहका यह प्रवाह ममताके धरातल पर अपनी अविराम गतिसे सदा बहता रहता है। आप व्यर्थ ही मोहमें न आवें। माता जी! आपने क्या इसी भावनासे मुझे जन्म दिया था कि मैं साधारण प्राणीकी तरह ममताके धरातलमें गेंदकी तरह उछलता फिरूँ। बुआ जीका यह कहना कि आदि ब्रह्माने विवाहकर चिरकाल तक गार्हस्थ्य जीवनमें बिताया था मेरे लिये हितावह नहीं है। वह तृतीय कालका अन्त और चतुर्थ कालका प्रारम्भ था। उनके ऊपर उस समय एक विशिष्ट उत्तरदायित्व था। उससे मैंने अपने उत्तरदायित्वकी तुलना कर विचार पूर्वक ही यह मार्ग चुना है। मेरे बाद धर्मतीर्थके प्रवर्तकोंका मार्ग एक तरहसे अवरुद्ध है। मुझे जितने जल्दी हो, अपने विकासके मार्गमें लग जाना चहिए, यही श्रेष्ठ मार्ग है। अन्यथा संसारकी गतिविधि को मोड देनेवाले शुद्ध वातावरणको स्थायित्व प्राप्त न हो सकेगा। अनन्त प्राणियोंका हवन करनेवाली भट्टियाँ अपना उग्र रूप धारण कर दीनदुखियोंको फिर सताना प्रारम्भ करदेंगी।

सिद्धार्थ—प्रिय महावीर! हम लोगोंने बड़ी साधना और कष्टके बाद तुम्हें पाया है। जनता अभी तुम्हारा वियोग नहीं सह सकेगी। तुम्हारे बिना वैशाली गणतंत्रमें अँधेरा हो जायगा। थोड़े दिन उसे और बल दो और उसे अभय बनाओ, यही हम चाहते हैं।

कुमार—देव! आपका यह मोह आपके विवेककी तुलनामें नगण्य है। फिर मैं संसारसे थोड़े ही जा रहा हूँ। जिसे आप सब हृदयसे चाहते हैं मैं वही करने जा रहा हूँ और वह काम घरमें रहकर नहीं हो सकता। प्रसन्न मनसे आज्ञा दीजिये।

इतना कहकर महावीर अपने कक्षमें चले गये और एकान्तमें संसारके स्वरूप पर विचार करने लगे। इतनेमें ही लौकान्तिक देवोंने आकर 'जय जय' शब्दसे राजप्राङ्गणको भर दिया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माता त्रिशला देवी और महाराजा सिद्धार्थ आश्चर्यमें डूब गये। उन्हें निश्चय हो गया कि कुमार अब नहीं रोके जा सकते। इनके कल्याण मार्गमें हम लोग विघ्न न बनें यही उचित है। माता त्रिशलाको धीरज बँधाकर महाराजा वहाँ आये जहाँ लौकान्तिक देव कुमारको घेरे हुए थे।

इसके बाद महाराजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला देवीने कहा—कुमार! आपकी प्रव्रज्या सफल हो एवं आपकी साधना आत्म-विकास को शीघ्र प्रजनन करे यही हमारी मनोकामना है। इससे आगे उनसे एक शब्द भी न बोला गया। उनका कण्ठ स्नेहके वारि-पूरसे अवरुद्ध हो चुका था।

कुमार महावीर उठकर देवोंकी लाई हुई पालकीमें जा बैठे। कुमार महावीरके विरागका समाचार गणतंत्र भरमें फैल गया। बड़े बड़े सामन्त और सरदारोंसे कुंडग्राम खचाखच भर गया। देवेन्द्रके पालकी उठानेके लिए उसके दण्डको हाथ लगाते ही उपस्थित नायकों और सामन्तोंने उसे स्वयं उठाकर ले चलनेके लिए इन्द्रसे अनुरोध किया।

इन्द्रने कहा—ऐसा क्यों? क्या हम भगवान् महावीरके उपासक नहीं हैं?

गणनायकोंने कहा—प्रियदर्शन देवेन्द्र! आपने बाल्यकालसे कुमार महावीरकी यथेच्छ सेवा की है। यह अवसर हमें दीजिए। यह पुरानी परम्परा है। हमारे बुजुर्ग सदासे तीर्थंङ्करोंके प्रव्रज्याकी पालकी सबसे प्रथम अपने कन्धों पर ही उठाते आ रहे हैं।

देवेन्द्र—यह सनातन प्रथा है इस बातको हमलोग जानते हैं। आपको हम लोग वारण नहीं करते। आप भी उठाइये, हम भी उठावें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महाराजा सिद्धार्थ—देवेन्द्र ! यह केवल सनातन प्रथा ही नहीं है। इसमें एक गहन उद्देश्य भी अन्तर्निहित है।

देवेन्द्र—राजन् ! हमारे समाधानके लिए वह तत्त्व समझानेकी कृपा करें। हम लोग इस सनातन प्रथाका रहस्य समझना चाहते हैं।

सिद्धार्थ—देवेन्द्र ! कुमार महावीर मानवकुलमें जन्मे हैं। हम लोग भी मानव हैं। मानव पर्याय ही पूर्ण स्वातंन्त्र्य प्रदान करनेवाली योनि है, अतः मोक्षमार्गमें साक्षात् निमित्त मनुष्य पर्यायवाले ही उस पालकीको प्रथम उठाते हैं। हममेंसे अनेक मानव कुमारके परिव्राजक होने पर उनके साथ दीक्षा तथा व्रतादि लेंगे। यदि आप भी हमारा या कुमारका अनुकरण कर सकते हों, तो पालकी उठा लें। हम लोगोंको कोई उजर नहीं है।

महाराज सिद्धार्थके युक्तियुक्त वचन सुनकर आगमका मर्मज्ञ इन्द्र हतप्रभ हो गया। वह अपनी देवपर्यायको धिक्कारने लगा। सहसा उसके मनमें आया, कास ! यदि मैं भी मनुष्य होता तो इसी समय महावीरके साथ परिव्राजक बनकर उग्र तपस्या द्वारा कर्मों का उन्मूलन कर पूर्ण स्वतन्त्र बनता।

इन्द्रके पालकी परसे हाथ उठाते ही राजाओंके साथ स्वयं महाराज सिद्धार्थने पालकी उठाकर अपने कंधों पर रख ली। देवेन्द्रों और मानवेन्द्रोंने भगवान् महावीरके जयनादसे आकाश गुँजा दिया।

कुमार महावीर मगसर वदी दशमीको गृह त्यागकर 'ज्ञातृ-खंड' नामक वनमें पहुँचे। देवेन्द्रोंने शुद्ध जलसे उनका अभिषेक किया। महावीरने एक साधारण शिला पर बैठकर आत्माको शरीर आदि पर पदार्थोंसे जुदा करनेके लिए स्वावलम्बिनी वृत्तिस्वरूप तपश्चरणको अङ्गीकार करनेके अभिप्रायसे अपने समस्त वस्त्राभूषण उतारकर अपने मस्तकके केशोंका पञ्चमुष्टि लुञ्च किया। जिस समय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमार महावीर प्रव्रज्या ले रहे थे उस समय सारी प्रजा और राज्यके बड़े बड़े सामन्त चारों ओरसे घेरे हुए महावीरकी विरक्ति एवं संसारकी अस्थिरताका अनुभव कर रहे थे। लोग कहते थे कि इतना कोमल शरीर और यह शीत की ऋतु। इनका यह नग्न शरीर इस शीतकी वेदनाको कैसे सहेगा? देखो, इन्होंने घासकी तरह अपने केश उखाड़ कर फेंक दिये और शरीर पर जरा भी रहम नहीं की। कोई कहता—'वे समर्थ हैं, बाल्यकालसे ही उनकी शरीर से कोई ममता न थी। राजकुमार होकर भी साधारण बालकोंकी तरह उनका सादा रहन-सहन था! कभी किसीने आजतक उन्हें क्रोध करते नहीं देखा जबसे पैदा हुए हैं आज तक राज्यमें कभी अकाल नहीं पड़ा। न कोई भयंकर व्याधि ही आई। उनकी छत्रछाया में प्रजाको जो सुख मिला उसका मिलना अब दुर्लभ है। हमारे नायक सिद्धार्थको तो देखो कैसे हाथ बांधे खड़े हैं, पर कुमार महावीरकी दृष्टि संसारके किसी प्रलोभनकी ओर नहीं है।

कुमार महावीर समस्त परिग्रहका त्याग कर बोले—कुटुम्ब वर्ग और उपस्थित सज्जनो! अब आप लोग प्रसन्नचित्त मुझे अपने मार्ग पर चलने की आज्ञा दें। मेरे द्वारा जान या अनजानमें हुए व्यवहारोंसे आपको जो कष्ट पहुँचा हो उसे भूल जाँय। मैं हृदयसे क्षमा करता हूँ। मेरी दृष्टिमें ससारके सभी जीव समान हैं। मेरा धर्म आत्माका धर्म है। उसका उद्देश्य संसारकी ममता त्याग कर स्वावलम्बनसे आत्मविकास करना है। रागद्वेषसे रहित हो प्राणीमात्र पर समभाव रखना उसकी चर्य्या है। अब आप लोग शान्तिसे घरकी ओर प्रस्थान करें। आजसे तब तक मेरा मौन रहेगा जब तक मेरी आत्मा राग-द्वेषका परिहार कर पूर्ण ज्ञानको न पा लेगा। प्रजामें हर तरह शान्ति बनाये रखिये। जिस तरह आपको जीने का अधिकार है उसी तरह प्राणीमात्रको जीने का अधिकार है इस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बातको मनसे कभी न भुलाइये। संसार एक घूमनेवाला चक्र है। इसके क्षणिक मोहमें आकर हमें अपनेको कभी न भूलना चाहिये। इतना कहकर महावीरने दोनों हाथ जोड़कर ॐ नमः सिद्धेभ्यः ! ॐ नमः सिद्धेभ्यः !! ॐ नमः सिद्धेभ्यः !!! कहकर पद्मासन योगसे एकाग्रदृष्टि हो समाधि लगा ली।

उपस्थित जनताने महावीरके जयनादसे दशों दिशायें आपूरित कर दीं। तपस्वी महावीरके चरणोंमें प्रणाम कर अनेक साधु पुरुषों ने प्रव्रज्या ले ली, कई स्त्री पुरुष अपनी शक्तिके अनुसार—१ स्थूलहिंसाका त्याग, २ स्थूल झूठ का त्याग ३ स्थूल चोरी का त्याग ४ स्वस्त्रीका त्याग, तथा ५ आवश्यकतासे ज्यादा परिग्रह न रखना, इन पाँच अणुव्रतोंको स्वीकार कर तपस्वी महावीरकी चर्या और गुणोंका स्मरण करते हुए अपने घर लौट आये।

तपस्वी महावीरकी दिनचर्य्या और उनकी साधना

महावीरके तपस्वी होनेपर उन्होंने आर्हत आगमोंकी साधुपरंपराके अनुसार २८ मूलगुण स्वीकार किये। विवरण इस प्रकार है—

पांच महाव्रत, पाँच समिति, पंचेन्द्रिय दमन, छः आवश्यक और सात नियम।

पाँच महाव्रत

(१) मनसे, वचनसे, शरीरसे, किसी जीवको दुःख न पहुँचाना अर्थात् पांच स्थावर—पृथ्वी जल, अग्नि, हवा और वनस्पतिकायिक जीवोंको तथा त्रस—दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चौइन्द्रिय और पांच इन्द्रिय जीवोंका सतानेको मनमें न लाना और न ऐसी प्रवृत्ति करना जिससे उन्हें कष्ट हो अहिंसा महाव्रत है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(२) मनमें असत्य बोलनेका विचार न लाना, वचनसे झूठ न बोलना और शरीरसे ऐसा इशारा न करना जो असत्यका पोषक हो—सत्य महाव्रत है।

(३) मनमें चोरी करनेका भाव न आने देना, वचनसे चौर कृत्यका उपदेश न देना तथा शरीरसे चोरी करनेकी प्रवृत्ति न करना अचौर्य्य महाव्रत है।

(४) मन, वचन और कायसे स्त्रीमात्रके संयोगका त्याग करना तथा हर प्रकारसे उनके सम्पर्कसे अपनेको बचाना ब्रह्मचर्य्य महाव्रत है।

(५) अन्तरंग परिग्रह—संसारके समस्त पदार्थोंमें ममताका अभाव तथा इसके फलस्वरूप बहिरंग परिग्रह—तृणको भी अपना न समझना और न उसे ग्रहण करना परिग्रह त्याग महाव्रत है। श्रमण इन पाँच पापोंको न तो स्वयं करते हैं, न अन्यसे कराते हैं और न करनेवालेको सम्मति ही देते हैं।

पाँच समिति

शरीरके रहते हुए श्रमण प्रवृत्तिका सर्वथा त्याग नहीं कर सकता, इसलिए प्रवृत्ति करते हुए उसमें सावधानी रखना समिति है। इसके पाँच भेद हैं—ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण और व्युत्सर्ग। स्वरूप इस प्रकार है—

(१) मार्ग देखकर चलना—जिस मार्ग पर मानव पशु चल चुके हों और जिस पर पूरा प्रकाश पड़ रहा हो उस पर चलते समय पूरा ध्यान रखे कि किसी भी जीवको मुझसे कष्ट न पहुँचे ईर्य्यासमिति है।

(२) मुखसे ऐसे वचन कहना जो किसी भी संसारी प्राणीको

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कष्ट कर न हों, साथ ही हितकारी परिमित एवं कर्णप्रिय हों। इस प्रकार वचनालाप करना भाषासमिति है।

(३) भोजनकी शुद्धता एवं अमादकताका ध्यान रखना एषणा समिति है।

(४) ज्ञान, संयम और शुद्धिके उपकरणोंके उठाने और रखने में जीव हिंसाका बचाव रखना आदाननिक्षेपणासमिति है।

(५) शरीरका मल त्यागते समय उसे निर्जीव स्थानमें छोड़ना उत्सर्गसमिति है।

पंचेन्द्रिय दमन

इन्द्रियाँ पाँच हैं जो जीवको सांसारिक विषयोंका आस्वाद करानेमें सहायक होती हैं, अतः श्रमणगण सांसारिक विषयोंकी वांछाका त्याग करनेके लिए सर्वप्रथम अपनी इन्द्रियों पर काबू पानेकी चेष्टा करते हैं। इसे ही पञ्चेन्द्रियदमन कहते हैं। खुलासा इस प्रकार है—

(१) शरीरको सुख पहुँचानेके अभिप्रायसे शीत, उष्ण, कोमल, और कठोर आदि पदार्थोंका सेवन नहीं करना स्पर्शनेन्द्रिय-दमन है।

(२) जीभको सुहानेवाले रसोंका वर्जन करना रसनेन्द्रिय दमन है।

(३) नाकमें सुहानेवाली सुगन्धका परिहार करना नासिकेन्द्रियदमन है।

(४) आखोंको आकृष्ट करनेवाले सुन्दर रूपोंके देखनेकी ओर मनसे प्रवृत्ति न होना चक्षुइन्द्रियदमन है।

(५) कर्णको प्रिय लगनेवाले गीत-वाद्य तथा स्त्री पुरुषोंके सुन्दर वचनोंको इच्छा पूर्वक न सुनना कर्णेन्द्रियदमन है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छह आवश्यक

श्रमणके लिए मोक्षमार्गकी भावनाको जागृत रखनेके लिए प्रतिदिन अवश्य करणीय कार्य छह हैं,इसलिए उन्हें छह आवश्यक कहते हैं। वे ये हैं—सामायिक, वन्दना, स्तवन, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कायोत्सर्ग। इनका विशेष खुलासा इस प्रकार है—

(१) प्रतिदिन तीनों सन्ध्याकालोंमें समताभाव मनमें धारण कर अनन्यचित हो कमसे कम ४८ मिनट तक समताका अभ्यास कर आत्मचिन्तवन करना सामायिकआवश्यक है।

(२) जिन्होंने मोक्षमार्गको स्वीकार कर अपने आत्माको निर्मल बनाया है ऐसे महापुरुषोंके चिन्तन और गुणकीर्तन आदि द्वारा अपने कोमल शुद्धरूपकी प्राप्तिकी भावना करना वन्दनाआवश्यककर्म है।

(३) नाना स्तवनोंद्वारा परमेष्ठियोंका गुण गानकर नमस्कार करना स्तवनआवश्यक है।

(४) प्रमाद या असावधानीसे लगे हुये दोषोंकी आलोचना आदि द्वारा उनका परिहार करना प्रतिक्रमणआवश्यक है।

(५) आत्मजागरणमें साधकतम शास्त्रोंका पठन, मनन और अनुशीलन करना स्वाध्यायआवश्यक है।

(६) संयममें लगे दोषोंका परिमार्जन करनेके लिए एवं अप्रमादका संरक्षण करनेके लिए खड़े होकर ध्यान करना कायोत्सर्गआवश्यक है।

सात नियम

श्रमणगण शरीर आदि बाह्य पदार्थोंमें मन रञ्चमात्र भी नहीं जावे इस अभिप्रायकी सिद्धिके लिए अन्य सात नियमोंका कठोरता से पालन करते हैं। वे सात नियम ये हैं—अस्नान, अदन्त-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धावन, भूमिशायन, खड़े होकर आहार लेना, एकभुक्ति, नग्न रहना और केशलुञ्च। विवरण इस प्रकार है—

(१) शारीरिक मोहका त्याग करनेके लिये स्नान न करना।

(२) शरीरकी पुष्टिके लिये दन्तधावन न करना।

(३) प्रमादका अभाव करनेके लिए एवं संयम की रक्षार्थ निर्जन्तु भूमिमें सोना।

(४) भोजनमें लालसा बढ़ कर संयममें बाधा न आवे इसके लिये खड़े होकर अल्प आहार लेना।

(५) अन्न पानी आदि शुद्ध आहार दिनमें एक ही बार लेना।

(६) परावलम्बनका सहारा न लेना पड़े तथा बालकोंकी तरह निर्विकार मनोवृत्ति बनी रहे एवं शारीरिक व्यामोह पैदा न हो इसलिये यथाजात-नग्नावस्था धारण करना।

(७) शरीरमें ममता न हो, अतः स्वयं केशोंको उखाड़ कर फेंक देना।

ये २८ मूल गुण और इनके उत्तर भेदोंका पालन करते हुए महाश्रमण महावीर तपस्या करते हुए विचरने लगे। वे कभी एक पक्ष बाद, कभी एक मास बाद, कभी एक सप्ताह बाद और कभी एक दिन या दो दिनके अन्तरसे अपने करपात्रमें शुद्ध भोजन लेते थे और कभी नदीके किनारे, कभी पर्वतोंकी गुफामें तथा कभी कभी पर्वतके ऊपर जाकर अपनी समाधि लगाते थे।

१२ वर्ष, पाँच माह और पन्द्रह दिनकी कठिन तपस्याके बाद वैशाख शुक्ला दशमीके अपराह्णकालमें श्रमण महावीर समता तत्त्व का अभ्यास करते हुए राग-द्वेषके सर्वथा परिहारपूर्वक सर्वज्ञ सर्वदर्शी हुए।

भगवान् महावीरकी प्रव्रज्या जृम्भिक ग्रामके पास ऋजुकूला नदीके किनारे शिलापट्ट पर षष्ठोपवासके साथ सफल हुई। देवेन्द्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और नरेन्द्रोंने आकर सर्वज्ञ महावीर भगवान्के दिव्य विकासका अभिनन्दन कर कैवल्यमहोत्सव मनाया। इन्द्रने समवशरण सभाका निर्माण किया। भव्य जीव अपने विरोधोंको भूलकर प्रभुकी शरणमें आने लगे। किन्तु भगवान् महावीर ६६ दिन तक मौनावस्थामें ही विहार करते रहे। इस कारण समवशरण सभाके प्रमुख व्यक्तियोंने सम्मिलित होकर विचार किया कि सर्वज्ञता प्राप्त करनेके बाद भी भगवान् धर्मतीर्थका संचालन क्यों नहीं कर रहे हैं, क्या कारण है ?

सौधर्म इन्द्रने यह जानकर कि तीर्थंकरका दिव्य उपदेश तब तक नहीं होता जब तक उसको अवधारण करनेवाला विशिष्ट विद्वान् श्रमणोत्तम न हो। यह जानकर और इसके योग्य इन्द्रभूति ब्राह्मण विद्वानको समझकर वे उनके पास गये। इन्द्रभूति उस समय अपने ५०० शिष्योंको षड्दर्शन पढ़ा रहे थे। उन्होंने छद्मवेशी इन्द्रको भारतीय अतिथि सत्कार परम्पराके अनुसार सम्मानके साथ बिठाया और उनके शुभागमनका कारण तथा कुशल-वार्ता पूछी।

इन्द्रने कहा—विद्वन्! विशिष्ट विद्वान्से तत्त्वचर्चा करना ही मेरा कार्य है। इसी अभिप्रायसे मैं आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। आप बहुश्रुत विद्वान् हैं। सोचा है कि आपके ज्ञानसे लाभ उठाऊं।

इन्द्रभूति—विप्रदेव! अध्ययन अध्यापन कराना ही हमलोगोंका कार्य है। तत्त्वचर्चा विद्वानोंका भूषण है। पूछिये, क्या पूछना चाहते हैं ?

इन्द्र—देव! आज मैं एक विद्वान्के यहाँ ज्ञानगोष्ठी कर रहा था वे बड़े अश्रुतपूर्व ढंगसे तत्त्वका निरूपण करते हैं। उनकी तर्कणापूर्ण वाणीने मुझे बड़े सन्देहमें डाल दिया है।

इन्द्रभूति—विप्रदेव! तर्कणा एक चीज है और तत्त्वोंका निर्दोष प्रतपादन करना दूसरी चीज है। मेरा ध्यान है कि जो वेद-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेदाङ्गोंकी प्राचीन परम्परासे मेल खावे वही सुतत्त्व है। आपने अश्रुतपूर्व क्या सुना, कहिये।

इन्द्र—आचार्य्यश्रेष्ठ! उनका कहना है कि तत्त्व सात हैं, पदार्थ नव हैं, अस्तिकाय पाँच हैं, जीव छहकाय हैं, लेश्याएँ छह हैं और आत्माका स्वरूप रत्नत्रय है। वे इन्हीं तत्त्वोंके आधारसे मोक्षमार्ग का निरूपण करते हैं। आप बहुत बड़े विद्वान् हैं। आप ही इन बातों को अच्छी तरहसे समझ सकते हैं। हम सदृश अल्पज्ञानी इन सब बातोंको क्या समझें।

इन्द्रभूति—मालूम होता है कि किसी कुतर्कीने तुम्हें बहका दिया है। ये समस्त तत्त्व मनगढ़न्त हैं। इनका आधार न वेद है और न वेदाङ्ग ही।

इन्द्र—आचार्य्यवर! इसीलिए तो मैं पता लगाते लगाते आपके पास आया हूँ कि आप चलकर उनसे दो दो बातें कर लें। बहुतसे विद्वान् उनके पास आकर शंका-समाधान करते हैं, किन्तु वे सभी निरुत्तर होकर लौट जाते हैं।

इन्द्रभूति—देखो विप्र! इस प्रदेशमें कोई ऐसा विद्वान नहीं है जो मेरा शिष्य प्रशिष्य न हो। वे कहाँ से आये, तुम जानते हो तो बताओ।

इन्द्र—महाराज! उनकी तेजस्विता देखकर मेरा यह साहस नहीं हुआ कि उनसे कुछ पूछूँ। यदि आप चलकर उनसे स्वयं वार्तालाप करलें तो बड़ी कृपा हो। इन्द्रभूति चलनेके लिए राजी हो गये।

भगवान् महावीरका दिव्य सन्देश।

इन्द्रभूति पण्डितराज गौतम गोत्रीय ब्राह्मण थे। वे आषाढ़ शुक्ला पूर्णमासीकी रात्रिको समवशरणमें आये थे। किन्तु उसके मुखद्वार पर पहुँचते ही उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। वे सर्वज्ञ सर्वदर्शी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महावीरको साधारण विद्वान् समझते थे। किन्तु सभा-भवन देखते ही उनकी अन्तरात्माके कपाट खुल गये। वे छद्मवेशी इन्द्रसे बोले—विप्रदेव! मुझे यहाँ लाकर तुमने मेरे ऊपर बड़ा उपकार किया। सचमुच यह सब दर्शनीय है। देखो न, किसीने मेरा रेखाचित्र इस प्रस्तरस्तम्भमें बना दिया है। अरे! यह क्या? इसमें तो मेरे जन्म-जन्मोतरोंकी कथा लिखी है। अच्छा! अब समझा, यह कोई अलौकिक महात्मा हैं। चलकर इनका दर्शन करना चाहिए। समवशरणके बीचोंबीच एक उच्च स्थान था जिसके चारों ओर सीढ़ियाँ लगी थीं। उसी चबूतरे पर एक सिंहासन रखा था। प्रसन्नवदन महावीर उस पर आसीन हो अपनी दिव्य ज्योत्स्नासे सभाभवनकी शोभा बढ़ा रहे थे।

भगवान् महावीरको देखते ही इन्द्रभूतिका ज्ञान प्रस्फुटित हो गया और उन्हें स्वसंवेदन होने लगा। उन्हें संसारकी क्षणक्षयिता प्रत्यक्ष अनुभवमें आने लगी। विप्रवेशधारी इन्द्रने जीवादिके विषयमें जो अश्रुतपूर्वता बताई थी उसके महत्त्वको उन्होंने हृदयंगम किया। मेघ पटलके हट जाने पर जैसे सूर्य्यका प्रताप और प्रकाश एकसाथ प्रस्फुटित होता है उसी तरह इन्द्रभूतिका आत्मा जागरूक हो गया। वे सर्वज्ञ सर्वदर्शी महावीरकी स्तुति करते हुए बोले—भगवन् आपके साक्षात्कारमात्रसे ही प्राणियोंका अज्ञान विलयको प्राप्त हो जाता है। आपके प्रवचनका अपूर्व प्रभाव होगा इसमें सन्देह ही क्या है। इस सभाभवनके वातावरणने मुझे इतना प्रभावित किया है कि मेरे ये वस्त्र मुझे बोझसे प्रतीत होने लगे हैं। नाथ! आप धन्य हैं। आपके चरणोंमें मेरा बार बार प्रणाम है। अब मुझे आपके व्यक्तित्वमें और आत्माके अस्तित्वमें रञ्चमात्र भी सन्देह नहीं रहा है। आपके पुनीत सान्निध्यमात्रसे आत्म-जागरण हो जाता है। भगवन्! मुझे भी इन चरणकमलों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का अमर बना लीजिए। मुझे संसारके प्रपञ्च जहरीले अनुभूत होने लगे हैं। मेरे ऊपर दया कीजिए और अपने मुखारविन्दसे अमृत-वर्षा कर मुझे अभितृप्त कीजिए। इस प्रकार वहाँ आते ही इन्द्रभूतिका आत्मस्तर ऊँचा उठने लगा। उन्होंने सभाजनोंके देखते ही देखते अपने कपड़े उतार दिए और मस्तकके बाल उखाड़कर उन्हें घास-फूसकी तरह फेंक कर वे भगवान्के साक्षात् शिष्य हो गये।

इस प्रकार श्रमण होनेके बाद इन्द्रभूति मुनिराजने स्तवन कर भगवान् महावीरको जिस समय प्रणाम किया उस समय संसारमें सूर्यदेव अपनी बाल किरणोंसे संसारके अन्धकारको दूर कर उदित हो रहे थे। ठीक उसी वेलामें भगवान् महावीर प्रभुकी दिव्य-ध्वनि संसारके अनन्त प्राणियोंकी आत्मज्योति जागरण करती हुई प्रकट हुई।

भगवान्ने अपनी दिव्यध्वनिमें जीव, अजीव आदि विविध तत्त्वोंका और संसारकी दशाका स्वरूप विश्वके सामने रखा। उपस्थित प्राणी मन्त्रमुग्धकी तरह स्तम्भित होकर भगवान् की वाणी सुनने लगे।

भगवान्ने बतलाया कि जीव और अजीव तत्त्वके मेलसे संसार की रचना हुई है। इस संसारको न तो किसीने बनाया है न इसका किसीके द्वारा समूल उच्छेद हो सकता है। इस प्रकार यह संसार अनादि—अनन्त होकर भी परिवर्तनशील है। जिस प्रकार मिट्टीसे घड़ा बनता है और घड़ासे कालान्तरमें फिर मिट्टी हो जाती है इसी प्रकार बदलते रहना इसका स्वभाव है। संसारके सभी जीव पशु, पक्षी, मनुष्य देव और नारकी आदि नाना योनियोंमें परिभ्रमण करते रहते हैं।

चैतन्य जीव द्रव्यका लक्षण है। इसका परिणमन मूलतः दो तरहसे होता है—अशुद्ध परिणमन और शुद्ध परिणमन।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अशुद्ध परिणमन—अनादि कालसे जीवके साथ जड़का सम्बन्ध होनेसे वह विकारी हो रहा है। जैसे—खानिसे निकले हुए सोनेमें खानिका मैल—किट्ट कालिमादिक मिले रहते हैं, उससे शुद्ध सोना नहीं निकलता इसी तरह अनादि कालसे जीवके साथ जड़का सम्बन्ध हो रहा है।

जीवके समान जड़ भी अनादि कालसे परिणमनशील है। चैतन्यके सम्पर्कसे उसका भी अशुद्ध परिणमन होता रहता है। किन्तु यह बात सुनिश्चित है कि जड़ सदा जड़ ही रहेगा वह कभी चैतन्यरूपमें नहीं बदल सकता। इसी तरह चैतन्य कभी जड़ नहीं हो सकता। दोनोंके अशुद्ध परिणमन एक दूसरे को लिपटाये रहते हैं।

जब तक जीव इस भेदको नहीं जानता है तब तक वह उसे अपनाकर उससे लिपटा हुआ है और उसे लिपटाता रहता है। जैसे मदिराके आवेशमें मानवका ज्ञान इतना विकृत हो जाता है कि वह अपने सम्बन्धियोंको भी ठीक तरहसे नहीं पहिचान पाता। ठीक उसी तरह अनादिसे जड़के सम्पर्कने जीव पर ऐसा रंग जमा रखा है कि वह अपने असली चैतन्य रूपको नहीं समझ पाता और न यही अनुभव कर पाता है कि जड़के स्वभावसे मेरा स्वभाव जुदा है।

अजीव—पाँच प्रकारके हैं—पुद्गल, धर्म अधर्म, आकाश और काल। इनमेंसे पुद्गलके अतिरिक्त शेष चार अमूर्त हैं। केवल पुद्गल रूप, रस, गन्ध और स्पर्शवाला है। ये छहों द्रव्य अनादि-कालसे परिणमनशील हैं। ये निरन्तर अपनी शकलें बदलते रहते हैं। भेद केवल इतना है कि धर्म, अधर्म आकाश और काल इनका परिणाम सदा अपने स्वभावरूप ही होता है। इनमें विकाररूप परिणमन नहीं होता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चैतन्य–जीव और जड़–पुद्गलमें ही अनादिसे विकाररूप परिणमन करनेकी शक्ति है। इन दोनोंका जो विकाररूप परिणमन होता है उसीका नाम संसार है। जैसे चूनेका रंग स्वेत है और हलदीका रंग पीला है। किन्तु इन दोनोंको मिलाने पर उनका लाल रंग हो जाता है। अनजान मनुष्य यह नहीं समझ सकता कि यह रग दो पदार्थोंका है, एकका नहीं। किन्तु दोनों तत्वोंको जाननेवाला रसायनशास्त्री उन दोनोंके लाल रूपको देखते ही कह देता है कि यह लाल रंग हल्दी और चूनाका मिला हुआ परिणमन है, किसी एकका नहीं। इसी प्रकार जीवका परिणाम ज्ञाता द्रष्टा और पुद्गलका परिणाम रूप, रस, गंध और वर्ण होते हुए भी इन दोनों के सम्पर्कसे संसारकी उत्पत्ति हुई है। यदि जीवमें पुद्गलकर्मके संयोगसे राग, द्वेष और मोहादि रूप विकार न हो तो आत्मा केवल जानने देखनेवाला ही रहे। वह फिर कभी जड़को अपना न माने और न उनके संयोग वियोगमें सुख दुःखका ही अनुभव करे।

सम्यग्दर्शन—अपने स्वरूपके ज्ञानको ही स्वसंवेदन ज्ञान या सत्यका आलोक कहते हैं। उसके प्रकाशमें अपने स्वरूपको परसे भिन्न अनुभव करना ही सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्ज्ञान—सम्यग्दर्शन होनेके बाद जीवका दृष्टिकोण ही बदल जाता है। वह मिथ्या आलोकमें इन्द्रियोंके जिन विषयादिकको सुख रूप मानकर ग्रहण करता है, सत्य आलोकके होने पर उनमें राग, द्वेष और मोह नहीं करता और न उन्हें अपना मानता है। इसी विवेकका नाम सम्यग्ज्ञान है।

सम्यक्चारित्र—इसीप्रकार जब उसे सत्यके प्रकाशमें पूर्ण विवेक हो जाता है तब उसकी क्रमशः संसारके पदार्थोंमें अन्तर्लालसा भी नहीं रहती। जितने भी इन्द्रियके विषय हैं उनको वह या तो सेवन ही नहीं करता और यदि सेवन करता है तो इतना विवेक उसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सदा रहता है कि ये भोग मेरे कर्म रोगकी प्रतिक्रियामात्र है। वह सदा इनसे छुटकारा पाना चाहता है। जैसे—जेलखानेमें पड़ा हुआ कैदी नाना प्रकारके खिलौने बनाता है, पर वह समझता है कि ये सब मेरे खेलनेके लिये नहीं हैं। ये सब अन्यके लिए हैं। मुझे तो इन्हें जेल दारोगाकी आज्ञासे बनाना पड़ता है। यदि मैं इस कारागारसे छूट जाऊँ तो ही अपने रोजगारमें लग सकता हूँ। यह तो जेलके नियमोंका पालन है जो मुझे करना पड़ता है। ठीक इसी तरह विवेकी आत्मा भी संसारके काम करता हुआ सदा यही समझता रहता है कि यह सब उपाधि है। इससे छुटकारा मिलने पर ही मैं अपने स्वरूपको प्राप्त कर सकता हूँ। उससे जितना बन पड़ता है उतना इन्द्रिय और मनको अपने काबूमें करता है। इस प्रकार सच्चे अर्थमें इन्द्रिय और मनके रोकनेको सम्यक्चरित्र कहते हैं।

यही सम्यक्दर्शन, सम्यज्ञान और सम्यक्चरित्र मिलकर रत्नत्रय है। इन्हींके आंशिक प्रकाशमें जीवको अपनी रूपरेखाका ज्ञान होता है और जब ये पूर्ण विकासको प्राप्त हो जाते हैं तब यह जड़ कर्मोंसे अपना स्वरूप बिलकुल जुदा कर शुद्धज्ञानका पिंड शुद्ध परमात्मा हो जाता है। परमात्मा होनेकी यह शक्ति प्रत्येक जीवमें है। ऐसा कोई जीव नहीं है जिसमें परमात्मा बननेकी यह शक्ति न हो। यदि किसीका नाम ईश्वर है तो वह शुद्धात्मा ही है और अशुद्ध आत्माका नाम ही संसारी है। पुद्गलको नाना रूपोंमें बदलते हुए सबने देखा है। गेहूँमें ही रोटीका विकाश छिपा हुआ है। ज्ञानी आत्मा यह तत्त्व समझता है कि शक्तिकी अपेक्षा रोटी गेहुँओंमें अनादि है। किसीने गेहूँओंमें रोटी बननेकी शक्ति पैदा नहीं की और न कोई गेहूँकी रोटी बननेकी शक्तिको छीन ही सकता है। गेहूँमें शक्ति रूपसे रहनेवाले पक्वान्नोंको वह मात्र विकसित कर

५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सकता है। इसी तरह संसारके जड़ पदार्थ नाना रूपोंमें बदल कर संसारकी रचना करते रहते हैं। संसारी जीव उनके इन नाना रूपोंके होनेमें केवल निमित्त पड़ते हैं। जो अपनेको उन परिणमनोंका कर्ता मानते हैं वही उनका अज्ञान है।

संसारी जीव अपने स्वरूपको भूलकर पर द्रव्योंमें उलझ रहा है। यह इसी अज्ञानका फल है जिससे वह संसारके सभी पदार्थोंमें इष्ट अनिष्ट कल्पना करता रहता है। वह इस कल्पनाजालमें मकड़ीकी तरह उलझ रहा है। जिस तरह मकड़ी जालको स्वयं बनाती है पर जब वह उसी जालमें फंस जाती है तो वह उससे निकलनेमें असमर्थ हो जाती है। उस समय वह यह तत्त्व बिलकुल भूल जाती है कि इस जाल को जब मैंने स्वयं बनाया है तो मैं इसे तोड़कर निकल भी सकती हूँ। इसी तरह यह जीव भी अपनी कल्पनाओंसे जिस संसारको बनाता है उससे स्वयं निकल भी सकता है। पर यह अपनी अनन्त शक्तिको भूलकर अपनी कल्पनासे बनाये गये संसारमें लिपटा हुआ भटकता फिरता है। वह अपने विवेकसे इतना भ्रष्ट हो गया है जिससे वह अपने इन्द्रियोंके विषयोंको ही प्रधानता देने लगा है। वह नाना प्रकारके महल, मकान, हाथी, घोड़े और राजपाट आदि ऐसी आफतें जुटाए हुए है जिनके व्यामोहसे छुटकारा पाना कठिन हो गया है।

फिर भी उस मोही जीवके पास ये संसारके पदार्थ सदा काल नहीं रहते और न रह ही सकते हैं। वह जब एक शरीरको छोड़कर दूसरे शरीरमें जानेकी तैय्यारी करने लगता है तब उसे इस तत्त्वका ज्ञान होता है कि मैंने अपने इस मानव जीवनमें जिन्हें जोड़ा था वे सब अब मुझसे जुदा हो रहे हैं। जिनके लिये मैंने नाना अनर्थ किये, दुनियाको सताया एवं स्वयं दुखी हुआ वे ही सब पदार्थ अब मुझसे छूट रहे हैं। यह सब क्या विडम्बना है। अवसर आनेपर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनुष्य इसे समझता है पर मोहवश पुनः भूल जाता है। वह विचारने लगता है कि जिन चीजोंको मैं छोड़े जाता हूँ उन्हें मेरे बेटे और पोते भोगेंगे। सोचिए तो किसके बेटे और किसके पोते! मोहवश वह यह नहीं विचार पाता कि जब मैं ही जा रहा हूँ और मैं ही जाकर दूसरोंका बेटा पोता बनूंगा तब ये सब मेरे वहाँ क्या काम आवेंगे! छोड़ते समय यदि यह जीव यह बात न भूले तो वह अपने विवेकसे यहीं ऐसा सुन्दर मार्ग पकड़ ले जिससे फिर उसे दीघ संसारमें न भटकना पड़े।

जीवको यदि यह विवेक हो जावे कि संसारमें प्रत्येक आत्मा स्वतंत्र है। मैं भी स्वतंत्र जीव द्रव्य हूँ। न तो मैं आज तक किसी का हुआ और न कोई दूसरा जीव ही मेरा हो सकता है। ये सब कर्मोपाधिवश पर्य्याय क्रमसे होनेवाले स्वार्थोंके नाते हैं। तो वह उन पदार्थोंसे अपना नाता तोड़कर अपने रूपमें आ सकता है और उसके विवेकसे उसे यह सद्बुद्धि मिल सकती है कि आत्मन्! यह सब मानव पर्य्यायसम्बन्धी नाते हैं। देखो, इस समय तुम्हारी यह मानव पर्य्याय आयुके समाप्त होनेसे नष्ट हो रही है। इस शरीरके साथ जिनका नाता था वे सब यहीं छूट जायँगे। जब तुम्हें आगे चलकर नई सृष्टि बसाना है तब तुम इनमें क्यों मोह करते हो? जहाँ तुम्हें जानेकी इच्छा हो उसकी बात सोचो और उसके अनुकूल सामग्री जुटाओ।

यदि इतना विवेक इस जीवने जागृत कर लिया तो समझ लो उसे सत्य का आलोक मिल गया। फिर धीरे धीरे वह इसके प्रकाश में अपना मार्ग प्रशस्त बना लेगा।

अपने स्वरूपकी खोजमें ही जीवकी उन्नतिके मार्गका निर्माण होता है। उसका सम्बन्ध अन्य पदार्थोंसे रंचमात्र भी नहीं है। दूसरे साधन उपचारमार्ग तो बन सकते हैं पर साध्य केवल जीव

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही है। साधन वे ही सफल और ग्राह्य हैं, जो साध्यकी नियमसे सिद्धि करें। संसारी जीवोंको इस तत्त्व को गहराईसे समझनेकी आवश्यकता है। उपासना और क्रियाकांड का केवल इतना ही आशय है कि जीवको उससे अपने स्वरूपको समझनेका अवकाश मिल जाय। धर्म आत्माका स्वरूप है। साधनोंमें धर्म नहीं। साधनोंका कार्य केवल इतना है कि वे संसारके सभी पदार्थोंसे भिन्न आत्माके रेखाचित्रका स्पष्ट अनुभव करावें और संसारकी यातनाओंमें उलझे हुए प्राणीको आत्माकी ओर मोड़ दें। यदि साधनों ने इतना काम कर दिया तो ही वे साधकतम साधन हैं। अन्यथा वे भी संसारको बढ़ानेवाली उपाधियाँ हैं। जैसे माता, पिता, मित्र, बन्धु, बान्धव, धन-दौलत और मकान आदि पदार्थ संसारका व्यामोह पैदा करते हैं वही व्यामोह यदि साधनोंने पैदा किया तो वे आत्महितके साधक कैसे? यह आत्मा अकेला ही अनादिसे संसार में है और रहेगा। पर्य्यायके सम्बन्ध केवल उसी पर्य्याय तक सीमित हैं। एक भी पदार्थ दूसरी पर्य्याय तक साथ नहीं जाता, यह तत्त्व सुनिश्चित है; सन्देह रहित है। इसे समझ कर जीवको संसारमें वे ही काम करने चाहिये जो उसको सन्मार्गमें ले जाने में सहायक हों। ज्ञानी जीव विचार करता है कि जिस तरह मुझे अपने सुख साधनकी चिन्ता या आवश्यकता होती है वही चिन्ता और आवश्यकता संसारके प्रत्येक प्राणीको होती है। ऐसी अवस्थामें हमको दूसरेके मार्गमें रोड़े अटकाने या उन्हें कष्ट देकर अपने सुखसाधन जुटानेका क्या अधिकार है।

यदि हमको अपने प्राण प्यारे हैं तो दूसरोंको भी वे उतने ही प्यारे हैं। हम जिस तरह जीने के लिये नाना प्रयत्न करते हैं उसी तरह ये संसारी प्राणी करते हुए नजर आ रहे हैं। इनको दुख देकर या नष्टकर स्वयंको सुखी बनानेका अधिकार हमें किसने दिया? यदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किसीने यह अधिकार हमको दिया है तो मानना चाहिए कि जो अधिकार हमें मिला हुआ है वही अधिकार दूसरेको भी मिला हुआ है। ऐसी अवस्थामें हम दूसरोंके द्वारा सताये जाने पर दुखी क्यों होते हैं और होहल्ला क्यों मचाते हैं ? हमारा यह आन्दोलन ही अच्छी तरह यह बात साबित कर देता है कि हमें संसारमें किसीको सताने का अधिकार नहीं है। हमने संसारके साधनोंको जुटाकर अपनेको समर्थ मान लिया है यह हमारी महती अज्ञानता है। विश्वमें विषमताओंकी जनक एकमात्र यही मनोवृत्ति है। इसका निपात किये बिना हम अपनेको सुखी नहीं बना सकते।

इस विषमताका आधार हमारे स्वार्थी दृष्टिकोणने उत्पन्न किया है। यदि हम इतना समझ जावें तो संसारमें समताका आधार आ जावे और इसी आधार पर हम संसारके पदार्थोंको समझकर अपनी स्वार्थ वासनाओं पर नियंत्रण करलें। यही व्यक्तिका वास्तविक धर्म है। इसका सिर्फ एक ही रूप और नाम है—जिसे अहिंसा इस शब्दसे पुकारा जा सकता है।

इस अहिंसाका आधार-समता है। यही आत्मधर्मकी मौलिक भूमिका है। इस भूमिका पर हम जो भी इमारत बनावेंगे वह सर्वांग सुन्दर, आत्म प्रकाशक और स्वतंत्रताके अन्तिम प्रसाद तक पहुँचानेवाली सीढ़ियोंका काम देगी इसमें सन्देह नहीं। इसके सद्भावमें संसारके किसी भी प्राणीको हमसे किसी प्रकारकी शिकायत न रह जावेगी। इस महलकी जितनी सीढ़ियाँ होंगी उनका आधार अहिंसा होनेसे वह अज्ञान या संसारी स्वार्थोंको नहीं पनपने देगी। धीरे धीरे वह उस महलको इतना दृढ़ बना देगा कि संसारकी किसी भी शक्तिका कोई प्रभाव हमें विचलित न कर सकेगा। आज धर्मके नामपर जो हजारों प्राणियोंको जीते जलानेकी पद्धति है वह आगे नहीं रहेगी। असत्यके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जितने आधार हैं वे सब कपूरकी तरह उड़ जावेंगे। सत्यके आलोकमें कोई भी प्राणी पर पदार्थोंको अपना माननेकी चेष्टा न करेगा। इससे चोरीकी भावना भी आत्मामें स्थान न पा सकेगी। हमारा लक्ष्य अपने आत्मजागरण की ओर होगा। इससे पूर्ण ब्रह्मचर्यको प्रश्रय मिलेगा। तथा इसी आलोकमें संसारके तृणादि पदार्थोंको भी अपना समझनेकी भावना न रहेगी। इस प्रकार संसारके जिन प्रलोभनोंसे संसारका मंदिर खड़ा है वह ज्ञानी आत्मा की दृष्टिमें अत्यन्त अग्राह्य हो जावेगा। इन्हीं पाँचों—हिंसा, असत्य, चौर्य्य कुशील और परिग्रहकी ममता जीवको संसारमें अनादिसे बांधे चली आ रही है। विवेकके जागृत होनेके बाद आत्मामें इनके प्रति कोई आकर्षण शेष नहीं रह जाता है और आत्मा अपना विकाश कर पूर्ण स्वतंत्र हो जाता है। यही धार्मिक तत्त्व है। यही सम्यग्ज्ञान है और यही पूर्ण विवेक है। भगवान् महावीर की प्रथम धर्मदेशना यही थी। इन्द्रभूति गणधरने इसे समझा और इसकी विशद व्याख्या कर द्वादशांग श्रुत की प्रतिष्ठा की।

भगवान् महावीर ३० वर्ष तक इसी प्रकार मोक्षमार्गका व्याख्यान करते हुए भारतवर्षके अनेक भागोंमें गये। फिर भी उनका इस प्रदेशमें विशेषरूपसे विहार हुआ। इस प्रदेशका 'विहार' यह नाम पड़नेका एक मात्र यही कारण है। उनका चिन्ह सिंह था और उनकी समवसरण सभाके आगे मानस्तम्भ रहता था। इसीसे इस प्रदेशके कुछ हिस्सेको सिंहभूमि और मानभूमि कहा जाता है। उनका विश्व पर विशेषतः इस प्रदेश पर बड़ा उपकार है। एक ऐसा व्यक्तित्व जो इस विहार भूमिमें जन्मा, बड़ा हुआ और आत्मसाधना द्वारा वीतराग सर्वज्ञ सर्वदर्शी हो मोक्षमार्गका उपदेष्टा हुआ उसकी पावन रजसे यह भूमि कृतकृत्य है। यह सौभाग्य इस विहारको मिला यह हमें न भूल जाना चाहिए। यह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विहार प्रदेश जिस प्रकार उनके गर्भ जन्म, तप और कैवल्य लाभसे पवित्र हुआ है उसी प्रकार उन्होंने अपनी ऐहिक लीलाका संवरण भी इसी प्रदेशमें किया है। जहाँ उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया था वह स्थान अन्य कोई नहीं, इस प्रदेशका पावाग्राम ही है। आजसे लगभग २४८२ वर्ष पूर्व वे इस ग्रामके कमलवनके सन्निकट महानिर्वाण को प्राप्त हुए थे।

हम सब भारतवासी जानते हैं कि भगवान् महावीर किसी विशेष वर्ग या सम्प्रदायके नहीं थे। वे विश्वकी विभूति और अहिंसाका अवतार थे। जिस अहिंसाकी करामातको हमने अपने राष्ट्रीय जीवनमें सफल होते हुए देखा है और जिसकी निर्मल धाराको आगे बढ़ानेका श्रेय इस युगमें महात्मा गाँधीको मिला है वह एकमात्र भगवान् महावीरकी अन्तःसाधनाका सुफल है।

आज उन्हींका पवित्र जन्मदिवस है। इस अवसर पर हम आशा करते हैं कि भारतकी जनता एक सूत्रमें बँधकर गम्भीर गवेषणा द्वारा ऐसा मार्ग निर्धारित करेगी जिसमें स्वतंत्र भारतको अहिंसाकी तिरंगी पताकाके नीचे शांतिकी श्वास लेनेका अवसर प्राप्त हो सके।

अहिंसाके अवतार भगवान् महावीर स्वामीकी जय

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

झण्डा गायन

केशरिया झण्डा फहरे।
स्वातंत्र्य विश्व में लहरे।

आत्मज्योति प्रकटानेवाला, नरतन सफल बनानेवाला
ज्ञानसूर्य्य की प्रखर रश्मिसे मन मन्दिरमें ठहरे
केशरिया झण्डा फहरे।१।

ऋषभदेवने इसे उठाया, भारत को निज रूप दिखाया
पूर्ण अहिंसा का प्रतीक भारत मस्तक पर लहरे
केशरिया झण्डा फहरे।२।

मोहनींदको दूर भगाकर, निर्मल स्वात्मज्योति चमकाकर
दयाधर्म की अमल कान्ति के भूमितल पर छहरे
केशरिया झण्डा फहरे।३।

समता की लहरों से भरदे, मन मन्दिरको उन्नत करदे
ज्ञान'मणी'की अचल प्रभा से कर्म कालिमा झहरे
केशरिया झण्डा फहरे।४।

शुक्ल त्रयोदशि चैत्रमास की, वीरजन्म-भारत प्रकाश की
नूतन रश्मि प्रभाकर से हिंसा-पथ कल्मष डहरे
केशरिया झण्डा फहरे।५।

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर गीतावली

श्री वीर आह्वान

१

श्री वीर प्रभो ! अब आ जा।

है शुक्ल त्रयोदशि चैत्रमास, प्रभु अब तो दरश दिखा जा
श्री वीर प्रभो ! अब आ जा।

सिद्धारथ त्रिशलाके नन्दन, सुन दुखियोंका यह आक्रन्दन
तोड़ फोड़ सब जग के बन्धन, उज्वल ज्योति जगा जा
श्री वीर प्रभो ! अब आ जा।

पशुवली हुताशन में तब थी ! कलहाग्नि भभकती है अब ही
हिंसा पथ रक्त विश्व सब ही, समता का पाठ पढ़ा जा !
श्री वीर प्रभो ! अब आ जा।

विषमाग्नि धधकती चहूं ओर, भौतिक विलास—वारिधि हिलोर
में विश्व हुआ स्वारथ विभोर, निजज्ञान किरण चमका जा
श्री वीर प्रभो ! अब आ जा।

मिट जाँय विषमतायें सारीं, हिंसा-घनघटा हटें कारीं
हों सत्य मार्ग रत नर नारी, वह ज्ञान 'मणी' दिखला जा
श्री वीर प्रभो ! अब आ जा।

२

जगादो, जगादो, जगादो, महावीर।
उज्ज्वल ज्योति जगादो महावीर !

कषाय वासना वसी है हर उछ्वासमें
उलझ रही है आत्म-ज्योति मोहपासमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाव–कर्मका बना अनन्य दास मैं
चिन्तामणी अलभ्य रत्न रखा पास मैं
हटाके तमस्तोमको दिखाओ महावीर।
जगादो, जगादो, जगादो, महावीर।
संसारके अनन्त जीव मोहयुक्त हैं
निजात्म बोधसे सदा रहते वियुक्त हैं
जड़ द्रव्य चाकचिक्यमें होते प्रसक्त हैं
औ नीच ऊँच दीन में होते विभक्त हैं।
भगाके मोहनींदको उठाओ महवीर
जगादो, जगादो, जगादो, महावीर।
सहजात भ्रातसे हैं सदा वैर मचाते
मानव शरीर पाके हा! दानव हैं कहाते
विषयान्ध क्रूर कपटके हैं जाल रचाते
औ दीन हीन प्रणियोंको नित्य सताते
सुनाके साम्य मंत्रको जगाओ महावीर
जगादो, जगादो, जगादो, महावीर।
कैसी दशा समाजकी है आज हो गई
वीर-प्रसूत सत्यकी आवाज खो गई
हिंसा असत्य चौर कृत्य लीन सभी हैं
काले बजार कृत्यमें प्रवीण अभी हैं
आ! आके दिव्य ज्योतिको दिखा दे महावीर
जगादो, जगादो. जगादो, महावीर।

३

त्रिशलाके लाड़ले !
अब आके ज्योति जगाजा।
घनघोर अँधेरा छाया है। ममता की अद्भुत माया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कायाने राज जमाया है। विषयोंमें मुझे रुलाया है।
आकर तम-तोम मिटाजा। त्रिशला के लाड़ले।

परपद में रमता फिरता हूँ। विषयोंमें जमता फिरता हूँ।
इन्द्रिय पोषण की ज्वाला में। सब कृत्य कर रहा काला मैं
यह काला दाग मिटा जा। त्रिशला के लाड़ले।

है शुक्ल चैत्रकी त्रयोदशी। सूनी रजिनी बिन वीर शशी।
त्रिशलाके प्यारे पूर्ण शशी। मेरी नैया मझधार फँसी।
समता का डाँड चला जा। त्रिशला के लाड़ले।

फिर ज्योति अहिंसा की चमके। औ सत्य क्षमा विजुली दमके
सत्पथ निर्मित सब ही होवें। सत्यार्थ-नीर मानस धोवें।
वह सरिता दिव्य बहा जा। त्रिशला के लाड़ले।

४

हम वीर की सन्तान सभी, क्यों ये भुलाते
हम वीर वीर हैं न क्यों ये शोर मचाते
है वीर धीर आत्मा ही इसको पुकारो
अब इसको सम्हारो

वह वीर भी था मानव, सिद्धार्थ का नन्दन
ममताका त्याग कर हुआ समता से जगवन्दन
है वीर धीर आत्मा ही इसको पुकारो
अब इसको सम्हारो

फिर क्यों नहीं बने हमीं उस वीर के नन्दन
माया ममत्व त्याग के सब तोड़ जगबन्धन
है वीर धीर आत्मा ही इसको पुकारो
अब इसको सम्हारो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है आत्मा वही जो परमात्मा होता
शक्ती सम्हाल अपनी जगत व्याधिको खोता
है वीर धीर आत्मा ही इसको पुकारो
अब इसको सम्हारो
अय वीर ! भावना यही मानवमें जगादो
अज्ञान तमस्तोमको अब शीघ्र हटादो
है वीर धीर आत्मा ही इसको पुकारो
अब इसको सम्हारो
करके प्रयत्न जिसने निजी ज्योति जगाली
वह वीर बन गया निधि अपनी पा ली
है वीर धीर आत्मा ही इसको पुकारो
अब इसको सम्हारो

५

दिगम्बर रूप में तेरे सभी गुणगण दिखाते हैं।
जगतकी वासना वैभव यहाँ नहिं रंग लाते हैं
विलक्षण रूप है तेरा विलक्षण ज्ञान पाया है
अनंताकाशवर्ती द्रव्य पर्य्यययुत समाया है
सुनाया तूने जग जन को द्रव्यगुण का सभी लेखा
सभी पर्य्याय बतलाई जिन्हें निज ज्ञान में देखा
विषमताएँ हटा जग की जगत को ज्योति दिखलाई
पढ़ाया पाठ समता का अहिंसा नीति सिखलाई
सत्य दृग् ज्ञान चरित से वीर तू बन गया ईश्वर
वही दे डाल अब मुझको अलौकिक ज्ञान जगदीश्वर!
जन्म दिन आज तेरा है जयन्ती के मनाने का
हुआ शुभयोग यह मेरा सफल जीवन बनाने का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री महावीर पूजन

त्रैशलेय वीरेन्द्र जिन शिद्धारथ सुत ईश
जन्म शुक्ल तेरस लियो चैत्र मास जगदीश।
जन्में दश अतिशय सहित इन्द्र कियो अभिशेष
मैं पूजों शुभ भाव से हरो हमारे क्लेश

ॐ ह्रीं श्री चैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणमण्डित श्रीवीर-जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सम्वौषडित्याह्वाननम्।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधीकरणम्।

शिखरिणीछन्द

मुनीन्द्रों के प्यारे जगत जनके हो प्रिय विभो !
हरो मेरी पीड़ा जगत-जरती में भ्रमण की
सजा के मैं लाया अमल जल तेरे ढिग प्रभो
हटै मेरा सारा 'दुरिततम' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षिति के जीवों को भव तपन ज्वाला लग रही
प्रशान्ती पाने को मलयज उशीरादिक मिला
घिसा के मैं लाया मनहरण तेरे ढिग प्रभो !
हटै मेरी सारी 'भवतपन' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धरे मैं ने नाना भव दुखप्रदाता जगत में।
सहा पीड़ाओं को भवभ्रमण ज्वाला निरत हो।
चुना के मैं लाया अछत शुभ मोती सम द्युती।
हटै मेरा सारा 'भवभ्रमण' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

व्यथा कामाग्नी की अति दुखद मैं ने नित सही।
दवाओं से व्याधी दव-दहन-ज्वाला सम बड़ी।
सुगन्धी मैं लाया पुहुप रसभीने ढिग प्रभो!
हटै मेरा सारा 'मदनमद' हो ज्ञान मुझमें।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा की ज्वालासे नर तन हमारा जल उठे।
मिटाने ये व्याधी सुरस सुरभी भोजन किये।
बना के मैं लाया घृत पयस पूरे ढिग प्रभो।
मिटै मेरी सारी 'क्षुददहन' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वापामीति स्वाहा।

अनादी का वैरी अतिखल महा मोह रिपु ये।
बनाके अज्ञानी भव भव घुमाया प्रमद दे।
सजा के दीपों की तम हरण लाया यह शिखा।
मिटै मेरा सारा 'घनतमस' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किये मैं ने नाना दुरित दुख दाता विधि सभी।
उन्हीं के फन्दे में विषय रत हूँ आज तक मैं।
हुताशन की ज्वाला मलयज सुगन्धी वह प्रभो !
जलें मेरे सारे 'दुरितखल' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फलों का भूखा मैं विकल फल पाये जगत में।
नहीं पाया ऐसा सफल करदे जो तुरत ही।
इसीसे मैं लाया अचित फल तेरे ढिग प्रभो !
मिटे मेरे सारे 'भवकुफल' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादी हूं लाया षटरस भरे अर्घ्य अब मैं।
मिटाने को व्याधी अभयपद पाने स्वहित ये।
अनर्घ्याप्ती कैसे भव शमनशाली मिल सकै।
मिटे मेरा सारा 'जगअटन' हो ज्ञान मुझ में।

ॐ ह्रीं श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म हुआ ऋद्धी बड़ी, सिद्धारथ नृप द्वार।
वर्द्धमान सार्थक हुए ज्योतिष के अनुसार॥
शुभमति ज्ञायक भाव दे सन्मति हुए जिनेश।
सम्यग्ज्ञान प्रसाद से हरो जगत के क्लेश॥
पशुओं के बलित्रास को सह न सके तुम वीर।
समता देने चल दिये बाँध अहिंसा तीर॥
सन्मति के गुण व्रात क्या?कहे कवी 'मणि' मन्द।
जो जगज्वाला नष्टकर करै सच्चिदानन्द॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जयमाला

(वसन्ततिलका छन्द)

हे वीर ! धीर ! जगनाथ वसुन्धरामें
आये सुनाक तजके धर वाल्यरूप ।
ऐसी मनोरम हुई तब ये धरित्री
जैसे वसन्त ऋतुमें सहकार फूले ॥ १ ॥

आनन्दकी लहरियाँ उठने लगीं थीं
थी मन्द वायु हरती तनु ताप ऐसे ।
जैसे अनभ्र नभ मण्डल की व्यथासे
सूखे सुपंक्तिवनमें नवप्राण आवें ॥ २ ॥

आचार हीन वसुधा जन डोलते थे
अज्ञान युक्त कृतियाँ करते सदा ही ।
था मूक–दीन–पशु–हव्य हुताशनों का
धर्मान्धता जगत को गुमराह करती ॥३॥

हिंसा समस्त जग को अति ही सुहाती
सत्यार्थ मार्ग अवरुद्ध सभी हुए थे ।
ऐसा अधर्म जगती तल को लुभाता
जो इन्द्रियार्थ परितृप्ति उन्हें कराता ॥४॥

संसार को विषमता पथ प्राण प्यारा
था एक मात्र निज वैभव जोड़ने का ।
ऐसे विषाक्त तरु की जड़ खोदने को
थी चाह एक नर पुंगव की धरा में ॥५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आये प्रवीर ! तुमने निज शक्ति पाके
औ व्याधियाँ जगतकी सब ही मिटाई
संसारकी विषमता सब ही हटाई
साम्य-प्रसूत जलसे वृष-वृक्ष सींचा ।।६।।

आत्मा-अनात्म पदका सब भेद खोला.
चैतन्य जीव जड़का यह चित्र आँका ।
आत्मस्वभाव परसे अति ही जुदा है
विज्ञान-रूप-मय-चेतन-नित्यवस्तू ।।७।।

स्वाभाविकी जड़ कृती बनती बिलाती
कोई नहीं सृजक है इस मेदिनी का ।
प्राणी सदा निज कृती कर मुक्ति पाते
है आत्मज्ञान जगती तल में वरिष्ठ ।।८।।

ये भव्य भाव जग में तुमने जगाये
जो आज भी जगतको निज शांति देते ।
हे देव ! मैं इसलिये वसु द्रव्य लाके
पादाब्जका भ्रमर हो करता सपर्य्या ।।९।।

ॐ ह्री श्रीचैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

गणधर इन्द्र न कर सके तुम गुण वर्णन ईश ।
मैं मति मन्द कहूं कहा अतः नमाऊ शीष ।।

इति आशीर्वादः

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भारतीय साहित्य सदनके प्रकाशन

(१) मोक्षशास्त्र—अनुवादक—जैनधर्मालंकार पं० पन्नालालजी शास्त्री काव्यतीर्थ प्रोफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस। कालेज, हाईस्कूल और पाठशालाके छात्रोंको सरलतासे बोध करानेवाली, स्वाध्याय प्रेमियोंके लिए अत्युपयोगी भावपूर्ण टीका। की० सजिल्द २)

(२) आदीशस्तवन (भक्तामरस्तोत्र)—अनुवादक-पं० अमृतलालजी दर्शनाचार्य्य सा० अध्यापक स्या० म० काशी, समश्लोकी पद्यानुवाद, अन्वय और शब्दार्थ-भावार्थ सहित की०।≈)

(३) वीरता की कसौटी—चक्रवर्ती भरत को अपनी वीरताका परिचय देकर महामना बाहुबलीने संसारकी संपत्ति और चक्रवर्तीकी महान् विभूतिका त्याग कर वीरताका उत्कट आदर्श उपस्थित किया था। प्रस्तुत खण्डकाव्यमें प्रो० धर्मालंकार जीने अपनी सर्वतोमुखी प्रज्ञाका परिचय देकर इतना सुन्दर कलामय चित्र उपस्थित किया है कि आप पढ़कर मुग्ध हो जावेंगे। यह खड़ी बोलीमें जैन समाजका प्रथम खण्डकाव्य है जो जैन परीक्षालयोंके बिशारदके कोर्समें तथा हाईस्कूलोंमें रखे जाने योग्य है। यह काव्य दशवीं कक्षाके कोर्स के लिये पूर्ण-उपयुक्त है। की० ||।)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(४) आत्मसमर्पण—पं० बालचन्द्रजी साहित्याचार्य एम० ए० ने प्रस्तुत ग्रन्थमें भावपूर्ण १५ कहानियोंका इतना सुन्दर साहित्य की भाषा में चित्रण किया है कि आप एक बार पुस्तक प्रारम्भकर पूरा पढ़े बिना नहीं छोड़ सकते। भाषा इतनी प्राञ्जल है कि एक बार प्रारम्भ कर पूर्ण किये बिना पुस्तक छोड़ी नहीं जा सकती है। की० १॥)

(५) आत्मधर्म–प्रथम भाग—यह पुस्तक पाँचवीं छठवीं कक्षाके छात्रोंके लिए प्रो० धर्मालंकारजीने कहानियों द्वारा नवीन ढंगसे सदाचार और धार्मिक ज्ञान करानेके लिये छात्रोपयोगी भाषामें लिखी है। जैन हाईस्कूल और जैन पाठशालाओंके छात्रोंमें प्राथमिक धर्मज्ञान करानेके लिये अत्यन्त उपयुक्त है। की० ॥)

विमलकुमार पंचरत्न
राजेन्द्र स्टुडिओ, भगवान् बजार,
छपरा (बिहार)

नया संसार प्रेस, बनारस।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi